भक्त हृदय के उदगार..

अनमोल राम बेमोल बिकें, पर मन तू जाने ना।
गर उसकी ओर निगाह करे, तो ही तो जाने ना।।

कभी यह माँगे कभी वह माँगे, कभी उसको माँगे ना।
वह आये तो कैसे आये, तू भी उसे माँगे ना।।

लोलुप्त नयन से जग निरखे, कभी राम को देखे ना।
जिस राम की लीला सारी है, उसको तू देखे ना।।

विषय समूह में तू खोई, वा कृपा तू माने ना।
जिसने दी तुझको जग सारी, उसको पहचाने ना।।

रचना उसकी यह जग छलिया, लोलुप्त हुए निहार रहे।
जिस राम की ही सब लीला है, उस सों बेमुख हुए।।

- परम पूज्य माँ
प्रार्थना शास्त्र 1/ 71
12.7.1959

अनुक्रमणिका

1. भक्त हृदय के उदगार..
अनमोल राम बेमोल बिकें

3. कोई उससे कुछ भी माँगे, वह सबकी झोली भर देता है!
अर्पणा प्रकाशन - श्रीमद्भगवद्गीता - 'भगवद् बाँसुरी में जीवन धुन' 3/18-19

8. ज्ञान ज्ञान ही होता है, आवृत चाहे कुछ पल को हो..!
मुण्डकोपनिषद्, द्वितीय मुण्डक 2/10

12. उन्हीं से उन्हीं की राह माँगें.. वे सदैव तत्पर रहते हैं देने को..
श्रीमती पम्मी महता

16. कौन गुण गाऊँ मैं

17. 'पावनी गंगा माँ'
अर्पणा प्रकाशन - 'गंगा श्रद्धा प्राणप्रद'

21. आन्तर चेतना का प्रकट रूप
संकलन - श्रीमती शीला कपूर

23. देवता अहं मिटाव
परम पूज्य माँ से पिताजी के प्रश्नोत्तर

27. गुरु कृपा से ज्ञान यज्ञ!
डॉ. जे.के. महता

31. बुद्धि - एक दर्शन
विष्णु प्रिया महता

36. अर्पणा समाचार पत्र

सम्पादक की ओर से

गद्य में प्रस्तुत सभी लेख साधकों के प्रश्नों के उत्तर में परम पूज्य माँ द्वारा प्राप्त सत्संगों पर आधारित हैं और संकलन-कर्ता की निजी समझ के अनुकूल हैं। काव्य की पंक्तियाँ पूज्य माँ के मुखारविन्द से प्रवाहित दिव्य प्रवाह का अंश हैं; जिसे सुश्री छोटे माँ ने लेखनीबद्ध किया है। अपनी पूर्ण सामर्थ्य के अनुसार उसे ज्यों का त्यों प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है। प्रस्तुति में किसी भूल के लिये हम क्षमा प्रार्थी हैं।

सम्पादक : *पूनम मलिक*
सह सम्पादक : *श्रीमती साधना पाल*

पता : अर्पणा आश्रम, मधुबन, करनाल,
132 037, हरियाणा भारत

श्री हरीश्वर दयाल, अर्पणा ट्रस्ट, मधुबन, करनाल 132 037 01, हरियाणा द्वारा जून 2025 को प्रकाशित

कोई उससे कुछ भी माँगे,
वह सबकी झोली भर देता है!

नैव तस्य कृतेनार्थो नाकृतेनेह कश्चन।
न चास्य सर्वभूतेषु कश्चिदर्थव्यपाश्रयः।।

श्रीमद्भगवद्गीता- 3/18

यहाँ भगवान आत्मवान की बात करके कहते हैं कि :

शब्दार्थ :

1. **ऐसे पुरुष का इस संसार में,**
2. **न कुछ किये जाने से प्रयोजन होता है,**
3. **और न ही कुछ न किये जाने से प्रयोजन है,**
4. **तथा इनका सम्पूर्ण भूत प्राणियों से कुछ भी स्वार्थ नहीं।**

तत्व विस्तार :

ऐसा आत्मवान जीव :

क) प्रयोजन रहित होता है।

ख) आत्म तुष्ट, आप्तकाम और नित्य तृप्त आप है।

ग) क्या करना है क्या नहीं करना, इस द्वन्द्व से रहित है।

घ) किसी से क्या अब माँगे, जब कोई माँग ही नहीं रह जाती?

ङ) जो चाहना रहित है; उसको कोई क्या दे सकता है?

च) कोई उससे कुछ भी माँगे, वह सबकी झोली भर देता है।

छ) वह आप निराश्रय है, पर सबका आश्रय बन जाता है।

ज) मानो तन जो रह गया, वह भगवान का मन्दिर ही बन जाता है।

झ) बहु चाहना हिय धरी जग वाले उसके पास आते हैं और अपनी अपनी श्रद्धा के अनुसार उस आत्मवान से सब कुछ पा जाते हैं।

ञ) जो भी उससे सच्चा प्यार करें, वे वैसे ही बन जाते हैं।

आत्मवान सहवास परिणाम :

1. आत्मवान के अहर्निश सहवास से ज्ञान तो साधक सहज ही जान जाते हैं।
2. ज्ञान स्वरूप सामने देख कर साधना राह भी पहचान जाते हैं।
3. गर प्रियतम वह ही बन जाये, उसको ही रिझाना चाहते हैं।
4. जो भी ज्ञान उससे पाया, उस ज्ञान की प्रतिमा भी वे बन जाते हैं तथा उस ज्ञान का रूप धर आते हैं।
5. ऐसे आत्मवान के भक्त के लिये आत्मवान के शब्द आदेश बन जाते हैं और वे भक्त आत्मवान के आदेश को शिरोधार्य करके पल भर में वैसे ही बन जाते हैं।

आत्मवान के लिये संसार कोई अर्थ नहीं रखता। तन के नाते चाहना उठती है। उसका तन ही नहीं रहा, तो चाहना कैसी? तन के नाते राग द्वेष होते थे, तन से नाता गया तो वे सब चले गये। जग से प्रयोजन तन के नाते होता है। यह करना है, यह नहीं करना, यह भी तन के नाते ही होता है। विजय पराजय भी तन की ही होती है। निवृत्ति में रुचि या प्रवृत्ति की परवाह भी तन के नाते ही होती है।

जब तनत्व भाव अभाव हो ही गया तब तन की बातें कौन करे? तन गुण बंधा जो करे सो करे, अब गुणों से भी उसका संग नहीं रहता। ऐसे जीव का न तो कोई कर्तव्य होता है, न ही कोई प्रयोजन रह जाता है।

तस्मादसक्तः सततं कार्यं कर्म समाचर।
असक्तो ह्याचरन्कर्म परमाप्नोति पूरुषः।।

श्रीमद्भगवद्गीता- 3/19

इसलिये हे अर्जुन!

शब्दार्थ :

1. **संग रहित होकर,**
2. **निरन्तर करने योग्य जो कर्म हैं, उन्हें कर,**
3. **क्योंकि संग रहित कर्म करता हुआ,**
4. **मनुष्य परम गति को पा सकता है।**

तत्व विस्तार :

भगवान अर्जुन को पूर्ण सांख्य रूप ज्ञान देकर, आत्म तत्व विवेक देकर, यज्ञ का स्वरूप और रूप सुझा कर, तथा जन्म मरण की बात बता कर, अब कहते हैं, 'अर्जुन! पूर्ण का सारांश यह है कि तू संग छोड़ दे और संग के त्याग अर्थ अभ्यास रूप कर्म कर!'

1. राग द्वेष के मिटाव के अभ्यास रूप कर्म कर, तब ही राग द्वेष से उठ सकेगा।
2. गर तन से उठना है तो वह कर्म कर, जिससे तू तनत्व भाव से उठ सके।
3. आप्तकाम होना है तो यज्ञमय कर्म कर, यज्ञमय कर्मों से तू कामना रहित हो जायेगा।

4. नित्य तृप्त होना है तो भी कर्म कर, लोगों को तृप्त करते करते तू भी तृप्त हो जायेगा।

भगवान ने विधि भी कही :

1. संग छोड़ कर कर्म कर।
2. दूसरे को देना सीख और अपने आपको भूल कर दे।
3. तू सत् पथ पथिक है! सो दूसरे के लिये जीना सीख।
4. सत् पथ पथिक के लिये यज्ञ रूप जीवन बनाना अनिवार्य है। मुक्ति का पथ भी यह ही है।

साधक! कुछ करना है तो साधना कर और वही कर्म कर जो तुझे संग से विमुक्त कर दें तथा आत्म मय बना दें। वही कर जिससे :

1. राम मिल जायें तुझे।
2. तू आत्मवान बन सके।
3. तुम्हारा जीवन यज्ञमय और कर्म ब्रह्ममय हो जायें।
4. तुम्हारा स्वरूप से मिलन हो जाये।
5. तुम्हारे मोह तथा अहं मिट जायें।
6. तुझमें समता आ जाये तथा तू राग द्वेष से उठ सके।
7. अपनी इन्द्रियन् पर तेरा राज्य तो हो सके।

केवल यही तेरा काज है, बस तूने इतना ही करना है। पर यह अभ्यास तो तन किसी को देकर ही हो सकता है।

भगवान का आदेश भी यही है :

क) तू तन जग को दे दे, यह केवल यज्ञ ही करे।

ख) विपरीतता से मत घबरा और कर्तव्य कर्म करता जा।

ग) विपरीतता में मन परख सकेगा अपने ही लक्ष्य को!

घ) तुम लोगों से भाग मत जाना, जग को मत त्याग देना, क्योंकि यज्ञ यहीं हो सकता है।

ङ) तेरे यज्ञ का प्रसाद तो स्वतः ही बढ़ता जायेगा। गर लेने की जगह देना आ गया तो तुझे जीवन में जीना आ जायेगा।

भगवान ने यह भी कहा कि संग से रहित होकर कर्म कर। अनासक्त होकर अच्छी प्रकार कर्म कर।

संग :

नन्हीं! संग के अर्थ को पुनः स्पष्टता से समझ ले।

1. किसी भी विषय से तीव्र अनुराग को संग कहते हैं।
2. किसी भी विषय के साथ मिलाप, तदरूपता, मैत्री, एकता तथा संगम को संग कहते हैं।
3. किसी भी विषय पर मन के मुग्ध हो जाने को संग कहते हैं।
4. किसी भी विषय से ग्रन्थी युक्त हो जाने को संग कहते हैं।
5. किसी भी विषय के पाने की इच्छा को संग कहते हैं।
6. किसी भी विषय से न बिछुड़ने की प्रबल इच्छा को संग कहते हैं।
7. किसी को अपना बनाने की चाहना को संग कहते हैं।
8. किसी भी विषय से एकरूप हो जाने को संग कहते हैं।

नन्हीं! संग मन का गुण है। मन का जहाँ संग हो जाता है, वह उस विषय को अपना लेना

चाहता है और उसे अपने अधिकार में ले लेना चाहता है। वह उस विषय को अपना ही बना लेना चाहता है।

याद रहे, वास्तव में मन उस विषय के अधीन होना नहीं चाहता, वह उस विषय को अपने अधीन करना चाहता है। किन्तु मन अन्धा होता है और अपने अन्धेपन में विषय के अधीन हो जाता है। जब संग बढ़ जाता है, मन अपने संग वाले विषय की प्राप्ति के लिये और सब कुछ छोड़ने तथा भूलने के लिये तैयार हो जाता है; कम से कम जब तक वह अपने इच्छित विषय को प्राप्त नहीं कर लेता, वह अपने प्रेमास्पद को पाने के सम्पूर्ण यत्न करता है। जब वह उसे पा लेता है तब मन किसी अन्य विषय के पीछे भागता है।

संग को फिर से समझ!

1. संग अंधेपन की निशानी है।
2. संग जीव की विचार शक्ति को भी क्षीण कर देता है।
3. संग जीव की बुद्धि को भी क्षीण तथा न्यून कर देता है।
4. संग के कारण ही महा ज्ञानवान लोग सत पथ से विमुख हो जाते हैं।
5. संग के कारण ही महा ज्ञान के सिद्धान्तों की सहायता लेकर ज्ञान जानने वाले अधर्मी लोग भी अपने को धर्मोचित सिद्ध करना चाहते हैं।
6. संग के कारण ही अर्जुन भी मोह से आवृत हुए और रण से भागने के उपाय ढूँढने लगे। ज्ञान का आसरा लेकर अपने रण त्याग की चाहना को सत्पूर्ण सिद्ध करने लगे।

संग मन की रुचि ही है। एक विषय से संग होता है और जीव उसे पाना चाहता है। उसे पाने के लिये जीव अनेकों अन्य विषयों को ठुकरा देता है। संग के कारण ही राग तथा द्वेष का जन्म होता है। मानो संग ही दो हिस्सों में बंट जाता है।

जब एक विषय से संग हो जाता है, तो उस विषय को आप पूर्ण रूप से अपना लेना चाहते हैं और उस विषय को पाने की राहों में जो भी आये, उससे द्वेष करते हैं।

नन्हीं! यहाँ प्रेम और संग में भेद समझ लेना उपयुक्त होगा। संग किसी विषय को अपने अधीन करने के लिये होता है, और प्रेम आपको दूसरे के गुणों के अधीन तथा परायण करता है। प्रेम जीव को प्रेमास्पद के समान धर्म वाला बना देता है।

विषयों से संग का फल

1. संग आसक्ति की ओर ले जाता है।
2. संग सत् से वियोग की ओर ले जाता है।
3. संग अनुरक्ति की ओर ले जाता है।
4. संग तनत्व भाव का वर्धन करता है।
5. संग अहंकार का वर्धन करता है।
6. संग ममत्व रूपा अधिकार का वर्धन ही करता है।
7. संग विषयों से युक्त करता है।
8. संग मोह का वर्धन करता है।
9. संग कामना वर्धक है।
10. संग स्वार्थ की ओर ले जाता है।
11. संग राग और द्वेष को जन्म देता है।
12. जीवन में पूर्ण दोष संग के कारण होते हैं।

13. संग ही मन में विकार उत्पन्न करता है।
14. संग ही अपावन कर देता है।
15. संगपूर्ण कर्म पाप युक्त होते हैं।
16. संग अतृप्ति वर्धक होता है।
17. संग असुरत्व वर्धक होता है।
18. संग आपको गुणों का चाकर बनाता है और गुणों के अधीन कर देता है।
19. संग आपको विषयों का चाकर बनाता है और विषयों के अधीन कर देता है।
20. संग बुद्धि को विभ्रान्त कर देता है।
21. संग करने वाले जीव अपने प्रेमास्पद से कुछ लेना चाहते हैं।
22. वह अपने प्रेमास्पद को अपने लिये ही चाहते हैं।
23. उन्हें दूसरे की रुचि अरुचि की याद ही नहीं रहती।

आत्मा से प्रेम का परिणाम

1. प्रेम भक्ति की ओर ले जाता है।
2. प्रेम परम योग की ओर ले जाता है।
3. प्रेम विरक्ति की ओर ले जाता है।
4. प्रेम तनत्व भाव का वर्जन करता है।
5. प्रेम अहंकार का वर्जन करता है।
6. प्रेम ममत्व भाव का वर्जन करता है।
7. प्रेम विषयों से निर्लिप्त करता है।
8. प्रेम निर्मोह बनाता है।
9. प्रेम कामना वर्जक है।
10. प्रेम जीव को पुरुषार्थ तथा परमार्थ की ओर ले जाता है।
11. प्रेम राग द्वेष को ख़त्म करता है।
12. प्रेम प्रेमी को निर्दोष बना देता है।
13. प्रेम जीवन को निर्विकार बना देता है।
14. प्रेम अपावनता का विमोचन करता है।
15. प्रेमपूर्ण कर्म निष्काम तथा यज्ञमय ही होते हैं।
16. प्रेम जीव को नित्य तृप्त बना देता है।
17. प्रेम देवत्व वर्धक होता है।
18. प्रेम जीव को गुणातीत और गुण ठाकुर बना देता है।
19. प्रेम जीव को आत्मवान बना देता है।
20. प्रेम जीव की बुद्धि को शान्त करके उसे स्थितप्रज्ञ बना देता है।
21. प्रेम करने वाले अपने प्रेमास्पद को सब कुछ देना चाहते हैं।
22. वह अपने प्रेमास्पद के समान स्वयं बन जाना चाहते हैं।
23. उन्हें अपनी याद ही भूल जाती है।

नन्हीं साधिका! इसे यूँ समझ! प्रेम करने वाला अपने आपको भूल कर अपने प्रेमास्पद का बनना चाहता है। वह अपने प्रेमास्पद की स्थापना करना चाहता है और सारे कर्म अपने प्रेमास्पद की स्थापना के लिये ही करता है। वह ज्ञान भी अपने प्रेमास्पद की स्थापना के लिये ही समझना चाहता है। वह अपने प्रेमास्पद को ही रिझाने के लिये पूजा करता है। वह तो अपना आप अपने प्रेमास्पद को ही देने आया है। उसे अपने प्रेमास्पद से भी कुछ नहीं लेना।❖

ज्ञान ज्ञान ही होता है,
आवृत चाहे कुछ पल को हो..

न तत्र सूर्यो भाति न चन्द्रतारकं नेमा विद्युतो भान्ति कुतोऽयमग्निः।
तमेव भान्तमनुभाति सर्वं तस्य भासा सर्वमिद विभाति।।

मुण्डकोपनिषद् - 2/2/10

अर्थात् - *वहाँ न तो सूर्य प्रकाशित होता है; न चन्द्रमा और तारागण ही तथा न ये बिजलियाँ ही वहाँ चमकती हैं; फिर इस अग्नि के लिये तो कहना ही क्या है; क्योंकि उसके प्रकाशित होने पर ही सब उसके पीछे उसी के प्रकाश से प्रकाशित होते हैं; उसी के प्रकाश से यह सम्पूर्ण जगत् प्रकाशित होता है।*

तत्व ज्ञान

सूर्य चाँद ना तारागण, ना बिजुरी वहाँ चमके हैं।
अग्न की बात तो दूर रही, मिथ्यात्व में सब चमके हैं।।1।।

प्रकाश उसी सों ले कर के, प्रकाशित यह सब हो जायें।
प्रकाश उसी में पा कर के, प्रकाशित जग में हो पायें।।2।।

आदिकारण ज्योति का, महा ज्योति रे वह ही है।
ज्योति स्वरूप प्रकाश रूप, दीदायमान कर वह ही है।।3।।

वह ज्योति पति रे सूर्य को, ज्योतिर्मय रे करता है।
उस सों ज्योति पा करके, जग दीप्त यह करता है।।4।।

आश्रित हर ज्योति उस पे, ज्योति आश्रय बस वह ही है।
परम ज्योति ज्योति रूप, बस रे जान ले वह ही है।।5।।

ज्योति शक्ति एक वही, प्रकाश सूर्य शक्ति को दे।
सूर्य उसे क्या दर्शाये, जो आप शक्ति उसी सों ले।।6।।

वा सों ज्योति पा करके, जग प्रकाशित सूर्य करे।
अखण्ड ज्योति सत्ता में ही, प्रकाशित जग सूर्य करे।।7।।

सहस्र सूर्य मिल करी, परम को ना दर्शा सकें।
बाह्य प्रकाश सों जान ले, हम परम ठौर ना पा सकें।।8।।

नयनन् ज्योति क्या देखें, यह सूर्य देव सों बल पायें।
दृष्टि तब ही देख सके, सूर्य प्रकाश रे जब पायें।।9।।

बाह्य ज्योत सों पा ना सके, आन्तर ज्योत की बात को।
आत्म ज्योति सों आन्तर की, ज्योत ज्योतिर्मय अब हो।।10।।

स्वयं प्रकाश स्वत: सिद्ध, परम सत्त्व मैं जान लूँ।
अखण्ड तत्व अद्वैत तत्व, किसी विधि तो जान लूँ।।11।।

बुद्धि ज्योति तुम सों माँगूँ, यह चाहना अब रही नहीं।
बुद्धि सों तू है परे, बुद्धि की समस्या अब रही नहीं।।12।।

अज्ञान बदरिया छाई है, बुद्धि आवरण बन आई है।
मनोमल बन मान्यता, अब राहो में आई है।।13।।

मनो मान्यता चिंतन् के, मिथ्यात्व में मन भरमाई है।
इस कारण ओ मूर्ख मन, सत्त्व समझ ना पाई है।।14।।

प्रकाश लुप्त नहीं हो सके, गुप्त चाहे कुछ पल को हो।
ज्ञान ज्ञान ही होता है, आवृत चाहे कुछ पल को हो।।15।।

सूर्य छिपा है बदरी सों, गुप्त हुआ कुछ पल को।
लुप्त नहीं रे हो सके, आवृत हुआ है कुछ पल को।।16।।

मायिक ज्ञान के आसरे, माया पति ना दर्शाये।
माया बंधे मायिक मन को, परम समझ ही ना आये।।17।।

सर्वज्ञाता सर्वोपरि, परम अधिष्ठान वह ही है।
परम चेतन सत्ता सार, जान ले मन बस वह ही है।।18।।

अहंता ममता मोह मल, आवृत परम को करती है।
अज्ञान मल संस्कार मल, अविद्या जग को रचती है।।19।।

बुद्धि मल मनो मल के कारण, सत्त्व ना जान सके।
नयनन् पुतरी उलटी हो, सत्त्व तत्व ना जान सके।।20।।

वृत्ति मल और चाह मल, तम बादल बन जाये है।
पात्र संग के कारण ही, सत्त्व समझ ना आये है।।21।।

या कह दूँ इक सपने की, आकृति पर इतराये है।
स्वप्नाकार वृत्ति प्रतिमा, ही समझ ना पाये है।।22।।

अखिल ज्योति की ज्योति वह, परम प्रकाश रे वह ही है।
प्रकाश स्वरूप रे वह ही है, सत्त्व स्वरूप रे वह ही है।।23।।

सूर्य वहाँ तक क्या पहुँचे, उसको क्या चमकायेगा।
सूर्य वा सों प्रकाश लिये, ही तो दमक रे पायेगा।।24।।

सहस्र सूर्य भी मिल करी, सत्त्व नहीं दर्शा सकें।
चन्द्र तारागण बिजुरी अग्न, कौन ठौर रे पा सकें।।25।।

परम प्रकाशित जिस पल हो, सूर्य प्रकाशित हो जाये।
प्रकाश उसी से पा कर के, प्रकाशवान यह हो जाये।।26।।

स्वप्न द्रष्टा से ज्योति पा, स्वप्नाकार वृत्ति रे बढ़े।
स्वप्न जग वह वृत्ति ही हो, देख मना रे आप रचे।।27।।

एक वृत्ति अनेक भये, नाम रूप भी बहु धरे।
जब लग द्रष्टा देखे उसे, तब लग ही तो वह रहे।।28।।

स्वप्न सृष्टि अरे पूर्ण ही, द्रष्टा का ही खेल है।
उसी विधि यह जग सारा, परम का इक खेल है।।29।।

स्वप्न में सूर्य तारागण, द्रष्टा सों ही प्रकाशित हों।
अनेक ब्रह्माण्ड सपने के, द्रष्टा में ही विराजित हों।।30।।

अनेक जीव अनेक मन, द्रष्टा के ही होते हैं।
जब लग द्रष्टा देखे है, तब लग ही तो होते हैं।।31।।

जिस विधि रे समझ ले, स्वप्न दृश्य रे आश्रित है।
उसको ना दर्शा सके, जिसके रे वह आश्रित है।।32।।

लाख भजन चिन्तन करे, द्रष्टा जान ना पायेगा।
जिस पल द्रष्टा को जाने, स्वप्न रे मिट ही जायेगा।।33।।

सत्त्व सार रे यह ही है, वृत्ति रूप धर आई है।
या कह लो इन कर्मण के, पात्र में बिम्ब रे आई है।।34।।

घटाकाश आकाश ही है, बिम्ब बिम्ब मात्र ही है।
पात्रण में वह पड़े हुये, मत समझो वह पात्र ही है।।35।।

बिम्ब से चाहो स्वरूप को, तुम रे मन अब जान लो।
क्योंकर यह रे हो पाये, बिम्ब रहे ना जान सको।।36।।

बिम्ब जिस पल मिट जाये, स्वरूप में समाये है।
कर्मण पात्र जो नहीं रहे, पुन: जन्म वहीं पाये है।।37।।

इसी विधि वह कहते हैं, सूर्य ना वह दर्शा सके।
बिन वा सों ज्योति लिये, प्रकाश ना चमका सके।।38।।

सार रे साधक समझ ले, सत्त्व ज्ञान रे यह ही है।
परम सत्त्व वह परम ब्रह्म, इससों परे भी यह ही है।।39।।

17-9-61
क्रमशः

उन्हीं से उन्हीं की राह माँगें..

वे सदैव तत्पर रहते हैं देने को,

अभाव कोई कहीं रहने ही नहीं देते!

श्रीमती पम्मी महता

हे श्रद्धेय, आप में श्रद्धा होगी तो ही तो आपकी यह देन जीवन में उतर पायेगी! हर अंग अंग से हे श्रेष्ठ, हे मनोहारी, आप ही आप प्रवाहित हों.. आप माँ का यह इलाही नूर ही मुझे घेर ले चहुँ ओर से.. व बहता जाये इस आंतर मन से..

आप प्रभु माँ की यह कनीज़, आपके इस प्रेममय जीवन में अटूट श्रद्धा व प्रेम लिए हुये नित्य आप ही आप में रह पाये। हे दीनानाथ दिनेश, जो अर्थ आपने इसके जीवन को दिया है, उसी यथार्थता में यह जीवन व्यतीत हो। आमीन! हे हृदयेश्वर, आइये, इस हृदय प्रवाह को अपने ही रंग से रंग लीजिये। हे श्री हरि, ऐसी श्रद्धा उपजाइये जो आपके सिवा इस हृदय से कुछ और न बहे.. यही मेरी करबद्ध प्रार्थना है आपसे!

हे मेरे मालिक, जब जान लिया व मान लिया कि इस जीवन में जानने योग्य व पाने योग्य कुछ है तो बस आप ही आप हैं.. इस साधक भाव को बहा कर अपने इन हरि चरणन् में ही इसे ले जाइये!

जाने हूँ, यह श्रद्धा कोई दे सकता है तो केवल आप ही दे सकते हैं.. इसलिये अपनी इस निमानी को पूर्णतया श्रद्धामय करी, इसे अपने में ही धर लीजिये। हर शै में आप ही का सौंदर्य देख कर आप ही में वर्ते.. क्योंकि श्रद्धा राही ही यह जान पाई है कि जगती में जो हो रहा है केवल आप ही से हो रहा है। इसी परम सत्य में एकनिष्ठ हुई, हे प्रभु जी, यही वरदान दीजिये कि श्रद्धामय होकर आपके ही हुक्म में व आपकी रज़ा में रह सकूँ। आप श्री हरि माँ की महिमा गाते हुए हम सब आपके ही रंग में रंगे जायें।

आप सभी के हो कर भी सभी से किस क़दर ऊपर हैं। आपकी वाणी के परम सत्य को सुनते हुये व आपके जीवन को देखते हुये; भक्ति भाव सों परिपूर्ण करी आपने अपने श्री चरणन् में किस निरन्तरता से इसे बहाया है.. स्वयं हैरतज़दा होती हुई अपने पर, आपके इस असीम अनुग्रह को देखते हुये धन्य धन्य हुई जाती हूँ.. आप श्री हरि माँ का धन्यवाद करते थकती नहीं।

हे भगवन, आइये इस अंतःकरण में उतर कर अपने ही प्रकाश से इसे भर लीजिये जो आप ही आप चहुँ ओर से प्रवाहित हों, इसे उसी प्रवाह में डुबो लीजिये। इस याचक मन की हे हरि, याचना क़बूल कर लीजियेगा।

आप प्रभु माँ की वाणी का सत्य स्वयंसिद्ध है। इसलिये आप ही से विनीत प्रार्थना है मेरी, 'कभी भी, कहीं भी संशयपूर्ण दुर्वृत्ति को आने नहीं दीजियेगा.. जो यह मन, यह हृदय, कहीं मैला न हो जाये.. जहाँ आपने अपने ही मुबारक क़दम स्वयं धरे हैं।' आपका, माँ, हर प्रवाह अतीव शुद्ध व पावन है क्योंकि इसका उद्गम, मध्य व अंत आप स्वयं हैं। इसलिये इसके दर्शन मात्र से ही कृतार्थ हो जाता है जीवन!

दर्शन का अर्थ यह नहीं कि पत्थर की मूर्त्त का दर्शन कर लिया.. आप माँ के जीवन का व्यक्त ज्ञान जो आप ही के अव्यक्त की महिमा है, उसी में पूर्ण श्रद्धा व आस्था रखी, उसे ही मानते जाना है अपने जीवन में..

आपके क़दमों से बनी रहगुज़र पर चल कर ही वास्तव में जीना आता है और जब वह सौंदर्य आंतर में आने लगता है तभी श्रद्धेय के प्रति आंतर भी श्रद्धामय होने लगता है। तभी तो हे माँ, आगे से आगे आपको देखने की चाहना बढ़ती ही चली जाती है। इस तरह से यह दर्शन पाने का प्रसाद भगवद् कृपा से ही मिलता है।

सच ही यह देन तो जीवन का अभ्यास है, मात्र दर्शन नहीं! आप प्रभु माँ के जीवन में पूर्ण श्रद्धा लिये उन्हीं से उन्हीं की राह माँगें तो वे जो सदैव देने को तत्पर रहते हैं.. कहीं भी कोई अभाव रहने ही नहीं देते। हमारा अविश्वास ही हमारे चित्त को उन श्री चरणन् में स्थिर नहीं होने देता.. क्योंकि किसी की श्रेष्ठता को एवं उन्हें पूज्य व परम पूज्य मान लेना कठिन होता है अहं पूर्ण जीव के लिए!

एक रोज़ आपके प्यार को अपने प्रति इस क़दर पावन कर लेंगे वह.. कि आपको श्रद्धायुक्त पात्र बना लेंगे, जो उन्हीं के प्यार की भिक्षा मिल जाये हमें। सो आइये, उन्हीं के इन मीठे वचनों में स्थिर मनी हो कर इसी श्रद्धा, भक्ति भाव से प्रार्थना करें.. आप माँ तो कभी निराश करते ही नहीं, ख़ुद पात्रता देते हैं और उसमें अपने परम प्रेम की भिक्षा डाल देते हैं।

पूर्ण विश्वास, अटूट श्रद्धा व आस्था लिये उन्हीं से उन्हीं को माँगने जब हम जायेंगे तो वे कभी भी आपको निराश नहीं करेंगे। आप माँ तो स्वयं कहते हैं, 'गर माँगना ही है कुछ, तो मुझसे मुझी को माँग! तू वह माँगता है जो मैंने पहले ही तेरी रेखा में लिख दिया है..'

कितना बड़ा आश्वासन दे रहे हैं प्रभु जी आप, हम जीव जगत को! इसके पश्चात् हृदय में प्रेम भाव उठता है तो श्रद्धा ही उनके प्रति झुकाव ले आती है। श्रद्धा मन की जाई है, मगर मन से परे है। यह तो हृदय से प्रवाहित होती है।

श्रद्धा कर्म नहीं, भाव है.. एक एहसास है, जहाँ 'मैं' को मिटाने की चाह है। समर्पण की चाहत ही श्रद्धा है और परम में टिकाव भी यही लाती है। जब अगाध प्रेम और अटूट विश्वास होने लगता है तभी चित्त शुद्ध हो जाता है.. या कहूँ, होने लगता है तथा अहम् का रफ़्ता-रफ़्ता अभाव होने लगता है व मिटाव होता जाता है।

मन के सभी दूषित भावों, जो मोह, संग, मम से भरे हैं.. जितने जितने अहं जनित भाव आंतर में कम होते जाते हैं, मन शुचिता व पावनता को पाने लगता है। आत्म तुष्टि भी इसी से होती है।

एक आनन्द की लहर आंतर में उठने लगती है और आत्मविभोर होने लगता है आंतर! पूज्य भाव का आना भी आप की श्रद्धा के हाथ है.. यही आप श्री हरि माँ ने बताया! बुद्धि को भी समर्पित कर पाना उस प्रभु की रज़ा में.. यह भी श्रद्धा की अतीव विलक्षण व अद्भुत देन है।

जितना जितना प्रभु में जीने का अभ्यास बढ़ेगा, उतनी-उतनी श्रद्धा बढ़ेगी। श्रद्धा अभ्यास नहीं! जब आपको प्रभु से दूरी का एहसास होता है, वह तड़प मिलन की जिज्ञासा बढ़ाने लगती है.. वही दर्द दवा बनने लगती है.. ऐसे में जो भी प्रभु से मिल जाये सर आँखों पे उठाना व विनम्रता से उठा लेना चाहिये व उसी का अभ्यास क़दम-ब-क़दम आगे से आगे ले जाने लगता है। साधक की साधना का आग़ाज़ श्रद्धा ही है और पूर्ति का भी।

श्रद्धा जब बढ़ने लगेगी, सर सिजदे में झुक ही जायेगा.. श्रद्धा पलने में ही प्रभु का नाम जन्म लेता है व पलता तथा बढ़ता है। 'मैं' का पूर्ण मिटाव ही श्रद्धा है। आप माँ तो अपने भक्त के हृदय में श्रद्धा व प्रेम के सिवा और कुछ भरते ही नहीं। चहूँ ओर से चित्त को एकाग्र करी व चित्त वृत्तियों को इसी एक ही भाव में ले आना भी श्रद्धा के हाथ है।

कर्मगति तो चलती चली जाती है, लेकिन श्रद्धालु अपने प्रभु में ही लीन रहता है। वह आंतर में अपने प्रभु की आकृति व छवि को निहारता हुआ मुदित मनी व गदगद हुआ रहता है। उसे लगने लगता है, न तो प्रेम और भक्ति में भेद है.. नाम और प्रभु एक ही हैं.. बस हरि चरणन् में मिट जाना ही प्रेम है। उसे उसी का हो जाना ही श्रद्धा का उपहार है। प्रभुमय हो जाना ही प्रभु जी का वरदान है।

अपनी सच्चाई के दर्शन कराने के लिये आप जीव को आंतर में धकेल कर ही उसे उसकी सत्यता के दर्शन कराते हैं। जिसने अपना सत्य जान लिया वही असीम कृतज्ञ भाव से प्रभु के प्रति समर्पित होने की ललक से भर जाता है। अपरम्पार की महिमा का बख़ान हम जैसे जीव कहाँ कर पाते हैं.. फिर भी महिमा गाने को जी करता है-

तोरी कृपा हुई है अपार, तेरा अन्त मैं जानूँ ना।
तू बेअन्त दयालु पिता, तेरी दया का सागर जानूँ ना।।

कैसे कैसे आंतर की चित्त ग्रंथियों को खोल देते हैं, आप केवल दर्शन मात्र से ही.. तब ही अपना सत्य देख कर पता चलता है-

तुम कैसे, हम कैसे प्रभु जी!

अपने दर्शनों में ही आपके दर्शनों का जो अनुभव होता है.. उसे ही मन बख़ान करी करी मन ही मन **स्वांत सुखाय** महसूस करता है।

आप प्रभु माँ के हुक्म की तामील हो जाये, यूँ ही निहाल हुआ याचना ही याचना करता जाता है व नमन करता जाता है मन ही मन! जहाँ भी देखता है, आप ही आप नज़री आते हैं। ऐसी देन को क्या नाम दे सकता है जीव?

कैसे-कैसे आप इतने प्यार से आँख खोलते ही चलते जाते हैं।

वाह सदगुरु! वाह सदगुरु!

कहते कहते मन अघाता ही नहीं!

कैसी सुन्दर आकृति आपकी मन में बस जाती है, आप माँ की कृपा से! इसी आपके स्वरूप के दर्शन करी करी स्वयं को भूल जाना कितना आसान हो जाता है.. या कहूँ, उधर देखने को तो तब मन करे जब सामने आप जैसे विभूति पाद श्री हरि जगत जननी माँ न हों! पर यहाँ तो यह हाल है,

'जिधर देखता हूँ उधर तू ही तू है।'

❖ ❖ ❖

कौन गुण गाऊँ मैं

ज्ञानघन ज्ञानदायिनी, ज्ञान प्रतिमा आप तू।
ज्ञानरूप ज्ञानप्रवाहिणी, वाङ्मयी आप तू।।

सत्यभाषिणी सत्यरमणी, सत्यवर्ती आप तू।
सत्यकर्मी सत्यदायिनी, सत् दर्शायिनी आप तू।।

प्रेमघन प्रेमरूपिणी, प्रेमप्रवाहिणी आप तू।
मृदुल नयनी आकर्षण करनी, मनोहरनी आप तू।।

दयामयी करुणादायिनी, विपदहरणी आप तू।
अशरण शरणा मनोमंजनी, पावन करनी आप तू।।

निर्बल अबला रूपिणी, महाबली है आप तू।
मौनरूपा अखिलकारिका, कर्मातीत है आप तू।।

निरपेक्ष काँक्षा रहित, उदासीन है आप तू।
अखिल रूपिणी रूपरहित, अप्रकट प्राक्ट्य आप तू।।

दुःखघन सुखदायिनी, आनन्द प्रतिमा आप तू।
मलविमोचनी, पावनकरनी, सरस्वती माँ आप तू।।

उर वासिनी दैवी गुणी, दैवी देन माँ है तू।
ज्ञान प्रेम दुग्ध दायिनी, राम वरदान माँ है तू।।

'पावनी गंगा माँ'

'गंगा पावनी है', पुरातन काल से यही मान्यता चली आई है। ऋषि-मुनियों ने निजी अनुभव से इसका रहस्य समझा तथा इसे तत्व रूप से जानकर, पावनकर माना। यहाँ कुछ जिज्ञासुओं के आग्रह पर अर्पणा प्रकाशन 'गंगा श्रद्धा प्राणप्रद' को श्रृंखलाबद्ध किया जा रहा है.. जिनके मन में जिज्ञासा थी कि यह एक साधारण नदिया पूज्य तथा पावनी किस प्रकार मानी गई हैं? गंगा जी का विशेष माहात्म्य क्या है?

इस में गंगा गर्भित रहस्य के तत्व का विज्ञानपूर्ण दृष्टि से विवरण प्रस्तुत है। यहाँ जीव को मान्यता बधित मन से उठा कर उसमें अतीव सरल एवं अलौकिक ढंग से गंगा के प्रति श्रद्धा की जागृति कराई गई है।

सत्यप्रिय साधक के प्रश्नों के उत्तर रूप में एक जल धारा रूपा नदिया ने गंगा माँ का रूप धारण कर के श्रद्धारहित हृदय को श्रद्धा से भरपूर कर दिया। पूज्य माँ ने यहाँ गंगा के उद्गम स्थान की महिमा गाकर जीवन में 'शिव' बनने के जिज्ञासु के लिए अतीव लग्न को आधार बनाकर श्रद्धाधाम तक जाने की क्रियात्मक विधि दर्शायी है।

मेजर जनरल बैजनाथ भण्डारी की पत्नी श्रीमती कमला भण्डारी की कृपा से हमें पूज्य माँ का भक्ति में स्निग्ध यह प्रवाह प्राप्त हुआ। श्रीमती भण्डारी स्पष्टवादी, विदुषी, शुभ्र कर्मी तथा धर्मपरायण हैं। निज बुद्धि बल से जब वह गंगा को पावनकर न मान सकीं तो गंगा के प्रति जग मान्यता के स्पष्टीकरण अर्थ पूज्य माँ से प्रश्न करने लगीं। इन्हीं की सच्चाई के प्रतिरूप में पूज्य माँ के मुखारविन्द से गंगा का निहित तत्व प्रवाहित हुआ है।

शास्त्रों में निहित वेदान्त की चरम सीमा को परम पूज्य माँ ने भक्ति से ओत-प्रोत विज्ञानमय रूप देकर आज के वैज्ञानिक युग के सन्दर्भ में सार्थक कर दिया है।

इन दैवी मूल्यों का पूज्य माँ के जीवन में मूर्तिमान दर्शन पाकर हम भी इनको अपने जीवन में प्रत्यक्ष करने के लिये प्रेरित होते हैं।

गंगा मैया के साथ परम पूज्य माँ का सम्बन्ध बहुत घनिष्ठ एवं सप्राण है। इसकी दिव्य झलक हमें उनके मुखारविन्द से प्रवाहित हृदयस्पर्शी उद्गारों में स्पष्ट मिलती है। उनके लिए गंगा मात्र एक जलधारा का प्रवाह न होकर एक सजीव, सप्राण व्यक्तित्व है..

... इठलाती मदमाती हुई, देख चली यह गंगा।
मन्द मन्द मुसकाती हुई, देख चली यह गंगा।।

प्यार से इसको देख लो, प्रेम फुहार है गंगा।
झूठी बात गर इसे कहो, असुअन की धार है गंगा।।

वह पूज्य माँ के लिए कभी उनकी चिरपरिचित प्रिय सखी हैं, जिससे दूर रहना उनके लिए असह्य हो जाता है। उनका भक्त हृदय गंगा को अंगीपाश करने के लिए तड़प उठता है..

तुम ही कहो अरी ओ गँगे, मम् प्रेम में क्या शक्ति नहीं?
पर यह ना कहना तू गँगे, इस मन में तेरी भक्ति नहीं।।

मैं तो चरण में आई थी, तूने ही लौटा दिया।
क्या पावन नहीं थी मैं सखी, जो मुँह को फिरा लिया।।

कहाँ से चलकर आई हूँ, तुम भी तो कुछ बढ़ आओ।
मैं तो तेरे द्वार पे आई हूँ, कर पकड़ सँग ले जाओ।।

कब लग गँगे दूर सों, तुम यूँ तरसाओगी।
इतना कह दो तुम मुख से, कब सँग ले जाओगी।।

प्रार्थना शास्त्र 1/159

उनके हृदय में उनका लक्ष्य स्पष्ट है - राम ही वह प्रियतम हैं, जिन तक उन्हें पहुँचना है! कहीं इनकी विरह वेदना भरी तड़प को सुन कर गंगा को यह आभास न हो जाए कि वही इनका लक्ष्य हैं, पूज्य माँ पुकार उठते हैं..

तेरी लग्न म यह व्यथित हृदय, तेरे चरणों में लाई हूँ।
अँसुअन् माला सँग लिये, तेरी शरण में आई हूँ।।

मैं जानूँ तेरी पात्र नहीं, पर तू ही पावन कर देना।
जो पथ मुझे तुम तक ले आये, वह ही मन भावन् कर देना।।

इतना याद रहे तुमको, मुझे राम धाम को जाना है।
तुम जानो मेरे राम को, इस कारण तुम तक आना है।।

गर यह जन्म तेरे चरण चढ़ा दूँ, क्या पावन हो जाऊँगी।
राम हिय में आये बसेंगे, नव जीवन जब पाऊँगी।।

इक तन क्या सखी बहुत जन्म में, मैंने बहु तन पाये हैं।
व्यर्थ गये मेरे सब जीवन, अभी राम दरस नहीं पाये हैं।।

अब तुम ही कहो मैं क्या करूँ, किसकी शरणाँ जा पड़ूँ।
किस सन्त को किस जा पाऊँ, जिसके चरणाँ जा पड़ूँ।।

प्रार्थना शास्त्र 1/ 161
23.10.59

गंगा माँ पावन करनी हैं और राम से मिलाने का पथ हैं, इसको प्रमाणित करते हैं पूज्य माँ के मुखारविन्द से प्रवाहित कृतज्ञ हृदय के भाव..

..तुझको क्या दूँ गंगे आज, तूने राम से हमें मिला दिया।
तोरे चरण में क्या बैठे, तूने राम कृपा प्रसाद दिया।।

अपने बहाव की दिशा बदल कर गंगा मैया किस विधि इनके हृदय राही बह गईं उसकी झलक मात्र मिलती है हमें निम्नलिखित पंक्तियों में..

पूछ ना सजनी गँगे ने, किस विध मुझे पावन किया।
मन में मेरे आने को, कुछ पल बदली उसने राह।।

इस वेग सों आई वह मन में, पूर्ण जग उसमें बह गया।
जन्म जन्म सों शुष्क यह मन, उस प्रेम प्रवाह सों हरा हुआ।।

जब आँख खुली मैंने देखा, गँगा रुख पुन: थी बदल चुकी।
गँगे मन प्रेम बेल सींची, वहाँ नाम की फल थी लगी हुई।।

जहान् की बस्ती जहाँ पे थी, वहाँ नाम नगर थी बसी हुई।
मोह तृष्णा द्वेष की कोश जो थी, वहाँ नाम नगर थी बसी हुई।।

जिस जा दुनिया बसती थी, वहाँ राम नाम ही रह गया।
कुछ पल 'मैं' भी मिट गई, मन राम राम ही कह गया।।

इस मन में सखी कुछ और था, यह भी मन मेरा भूल गया।
मुझे ऐसा लगे हे राम मेरे, मेरा राम ही सामने आ गया।।

इस मन में कभी कोई ओर था, यह भी अब ना मानूँ मैं।
जो भी था मेरा राम ही था, बस इतना ही जानूँ मैं।।

जो भी दीखा सामने, मुझे राम नज़र आने लगा।
बार बार मेरे लब पे सखी, राम राम ही आने लगा।।

प्रार्थना शास्त्र 1/163
26.10.59

इस प्रेम सम्बन्ध के अतिरिक्त एक दूसरा अत्यन्त यथार्थवादी पक्ष है गंगा का.. मृत्यु के उपरान्त हमारी अस्थियाँ इसी में प्रवाहित की जाएँगी। गंगा के तट पर आकर तन की क्षणभंगुरता की स्मृति साधक हृदय में वैराग्य उत्पन्न करती है।

पूज्य माँ कहते हैं, 'गंगा से प्यार है तो दे दो अपने आपको... गंगा से माँगो कि आपका दिल गंगा की भान्ति महान विशाल हो, आपके काम शिव जैसे हों!'

इसी भाव की प्रतिध्वनि गूँजती है निम्नलिखित पंक्तियों में...

..मौन हड्डियाँ ना दूँगी, मैं तो जीते जी ही आऊँगी।
पावन कर दे गंगे री, नहीं तो मैं अबहुँ मर जाऊँगी।।

गंगा माँ के साथ पूज्य माँ के निजी सम्बन्ध एवं अनुभव की झलक हमें प्रस्तुत संकलन में बार बार मिलती है। वास्तव में यह अद्वितीय प्रेम का तन्तु हम जैसे श्रद्धाविहीन हृदय को भी अपने में पिरो कर राम चरण तक ले जाने में सक्षम है, ऐसा हमने पाया है! *क्रमशः*

❖ ❖ ❖

आन्तर चेतना का प्रकट रूप

संकलन - श्रीमती शीला कपूर

प्रकृति के पीछे छिपी शक्ति

प्रकृति रचयिता पूर्ण ब्रह्म का विधान कितना नियमित, नियन्त्रित तथा अनुशासन बधित है कि अनादि काल से धरती की ऋतुयें, चाँद, सूर्य, सितारे इत्यादि सब प्राकृतिक तत्व नियमबद्ध चले आ रहे हैं। इस स्वचलित चक्र में ही भगवान की अखण्ड पूर्णता का दर्शन निहित है। एक छोटे से छोटे फूल को भी हाथ में लेकर देखा जाये तो उसमें एक प्रवीणतम कलाकार की झलक है, जहाँ एक-एक पंखुड़ी को मानो एक रंगीन कल्पना के साँचे में ढाला गया है।

यह देख कर अनायास ही मन में प्रश्न उठता है - यह क्योंकर और कैसे हुआ? वह कौन सी शक्ति है जिसमें इतना विस्तार करने की क्षमता है? भिन्न-भिन्न रूपों वाले असंख्य जीव भी इसी पूर्णता का परिचय देते हैं। केवल यही नहीं, बल्कि उन की कर्म-रेखायें भी उनके जन्म के संग ही पूर्व निर्माणित हो जाती हैं। वह सब पूर्व नियोजित पथ पर निश्चयात्मक रूप से आरूढ़ हैं। बाह्य ब्रह्माण्ड तो चर्म चक्षु द्वारा ग्राह्य होने से कुछ-कुछ बुद्धि ग्रहण में भी आता है, किन्तु आन्तरिक ब्रह्माण्ड को समझने के लिये तो वह दिव्य चक्षु चाहियें जो हम जैसों को सत्य दर्शन करवा सकें। इसके लिये शास्त्रों का आश्रय लेना अनिवार्य है। इस रहस्य को जानने के लिये शास्त्र की शरण में जा कर तो देखें कि उन्होंने क्या संकेत दिया है?

जीव का जन्म

जन्म जन्म के कर्मफल एकत्रित हो कर, जब एक प्रकार के कर्मों की थैली भर जाती है तो जीव के संस्कार ऐसे गर्भ की खोज में जाते हैं जहाँ वह नया तन धारण कर अपनी कामनाओं को तृप्त कर सकें। इसके पीछे बल है उस प्रधान पुकार का, जो अपना ध्येय निश्चित कर जीव को यंत्रवत् पथ पे आरूढ़ कर देती है। माता-पिता, भाई-बन्धु, कुटुम्ब, वातावरण इत्यादि सब संस्कारों के अनुरूप ही निश्चित होते हैं। जीव के अपने प्राकृतिक गुण स्वभाव भी संस्कारों पर ही आधारित हैं। इन सबके साथ-साथ अन्तःकरण की भी रचना हुई और परिस्थिति वश उसका विकास होता गया।

अन्तःकरण की आवाज़

संस्कार अनुकूल जन्म पाकर शिशु दिन-दिन बढ़ने लगा। हर पल बाह्य प्रज्ञता से प्रभावित, मनो अपावनता की पूर्व रचित चित्त ग्रन्थियाँ हर नई परिस्थिति में पक्की होने लगीं। अदृष्ट अन्तरात्मा ने हर बार दुहाई दी, "यह बात उचित नहीं, मत करो।" अन्तःकरण यह कह कर केवल निहित पुकार को

ही सहयोग देकर मन को चेत कर रहा था.. किन्तु आधुनिक बाह्य परिस्थिति, संग, निजी गुण-स्वभाव, सभी ने एकत्रित हो कर उस धीमी सी आन्तर चेतना को अनसुनी करके दबा दिया। अन्तरात्मा ने बहुत बार आवाज़ उठाई पर हर बार मुँह की खाई.. निराश हो कर एक दिन वह पूर्णतया मूक हो गई। यह निराशा उसकी नहीं, बल्कि जीव की अपनी हार थी क्योंकि इससे उसका अपना सुख वर्जित हो गया। जिस आन्तरिक पुकार के परिणामस्वरूप उसका जन्म हुआ था और जो जीवन का वास्तविक प्रयोजन था, जीव उससे विपरीत दिशा में चल पड़ा।

एक दिन ऐसा आया जब उस अन्तरात्मा की आवाज़ भगवान ने सुन ली, या यूँ कहो वह तात्विक पुकार इतनी घुटन, इतना दमन न सह सकी। जिस आन्तर चेतना की आवाज़ को मनोवृत्तियों के कारण साँस भी लेना नहीं मिला, वही साकार रूप धर कर बाहर गुरु रूप में प्रकट हो गई - मानो कह रही हों, "देखूँ! अब मेरी आवाज़ को कौन रोकेगा?"

गुरु की आवश्यकता

अन्तरात्मा का साकार रूप-बाह्य स्थित गुरु कभी प्यार से समझा कर, कभी झकझोर कर, जीव को बन्धनों से छुड़ा कर उसे सुखी बना सकते हैं। यह अन्तर्यामी भी हैं क्योंकि जीव के आन्तरतम भाव का ही तो प्राकट्य है यह; उसकी एक-एक ग्रन्थि से परिचित हैं। वास्तव में जीव अपने-आप को इतना नहीं जानता जितना गुरु उसे जानते हैं। इसी विलक्षणता के आधार पर गुरु जीव को उसके बन्धनों से मुक्त करके उसे उत्तरोत्तर ले जाते हैं।

एक और गुह्य राज़ है। साधक ने अपनी ही तीव्र पुकार के प्रति राहों में स्वयं ही इतने विघ्न बिखेर रखे हैं। जिन्हें दूर करना उसकी क्षमता से बाहर है। वह अपने अवगुणों, त्रुटियों आदि से पूर्णतया घिरा हुआ है। इनसे बाहर निकलने के लिये भी गुरु बिना गति नहीं। गुरु भी जब करुणा करके उसकी राहों का एक-एक काँटा बीनते हैं अर्थात् उसकी दुर्वृत्तियों का उसके सामने अनावरण करते हैं तो साधक को बहुत पीड़ा होती है।

ज्यों रोगी का ऑप्रेशन करके चिकित्सक उसके रोग को समूल निकाल देता है, तो रोगी चैन महसूस करता है, इसी प्रकार वृत्तियों का अनावरण पीड़ादायक होने पर भी साधक गुरु से दूर नहीं होता क्योंकि परिणामस्वरूप वह उस शीतलता और पीड़ा के निवारण का अनुभव करता है। इस कारण वह गुरु के और भी निकट आ जाता है। उसे साक्षात् अनुभव होता है कि हर विघ्न बाधा दूर होने से वह अपने ध्येय के निकट आने लगा; उसकी मनोशान्ति और सुख बढ़ने लगा। इस अनुभव राही साधक ने पूर्णतया पहचान लिया कि उसका लक्ष्य गुरु से अभेद है। बाह्य दर्शन द्वैत का होने पर भी वास्तव में वह एक है।❖

पूर्व अभिलेख संग्रह में से

देवता अहं मिटाव

पिता जी - केनोपनिषद् में कहा है कि देवताओं में अहं भाव उत्पन्न हुआ तो भगवान यक्ष के रूप में स्वयं प्रकट हो गए और उनकी अहं को मिटा दिया। बेचारे साधक का अहं कैसे मिटे?

सारांश - दैवी गुण सम्पन्न, देवत्व स्थित और महा विशिष्ट साधक की अंतिम 'मैं' रूपा अहंकार के मिटाव के लिये ब्रह्म स्वयं मूर्तिमान होते हैं। जब आंतर से दैवी गुण बहते हैं तो महा अनुभवी होते हुए भी साधक के अहं भाव का नितांत अभाव अनिवार्य नहीं। भगवान स्वयं आकर ऐसे साधक का कर थाम लेते हैं।

प्रश्न अर्पण

केनोपनिषद् में तूने कहा, विजेता देवता गण जो हुए।
अहंकार वा मिटाव को, ब्रह्म आप ही प्रकट भये।।1।।

साधक हिय में अहं उठे, सत् वह जान नहीं पाता है।
क्या राज़ है तुम कहो, क्यों आकर नहीं सुझाता है।।2।।

तत्व ज्ञान

देवत्व स्थिति प्रथम समझ, अलौकिक वा स्वरूप है।
दैवी सम्पदा परिपूर्ण, विशिष्ट उनका रूप है।।3।।

वीतराग विरक्त वह, प्रशांत मनी उन्हें जान लो।
धैर्यवान संयम पूर्ण, उत्कृष्ट उनको जान लो।।4।।

अनुकम्पा पूर्ण थे वह, करुणा पूर्ण हो चुके।
दयावान वह क्षमाशील, सौम्य रूप वह हो चुके।।5।।

शुद्ध चित्त लोक हित, यज्ञपूर्ण वह हो चुके।
तपमय जीवन उनका है, विनयशील विनम्र भये।।6।।

विशाल हृदय उदार हृदय, पीड़ा हारी हैं जान लो।
ऐसे पुण्यात्मा में भी, अहं हो यह जान लो।।7।।

ऐसे देवत्व उद्धार को, भगवान प्रकट तब होते हैं।
ऐसों के अहं मिटाव को, अवतार जन्म तब लेते हैं।।8।।

विजय भी देख ले क्या हुई, असुरन् पर यह विजय हुई।
अपनी न्यूनता पर कह लो, निज मन की ही विजय हुई।।9।।

देव शक्ति जीव की जो, हर इन्द्रिय में वह वास करे।
विषय आसक्त वह जब होये, देवत्व पल में ही मिटे।।10।।

भूले से फिर वह समझे, ब्रह्मतत्व हम पा गये।
चित्त वृत्ति निरुद्ध हुई, सत्त्व स्थिति हम पा गये।।11।।

अंतिम अहं अभी बाकी थी, कर्ता निज को मान गये।
तनत्व भाव से वह उठे, भोक्ता निज को मान रहे।।12।।

या यूँ कह लो 'मैं' नहीं गई, 'मैं' को सत् वह मान गये।
भगवान 'मैं' हो गई, 'मैं' राही वह अब मान रहे।।13।।

जिस साधक की पूछो तुम, वा यज्ञ पूर्ण हुआ नहीं।
देवत्व भाव वहाँ उठा नहीं, सत् में क़दम अभी धरा नहीं।।14।।

देवत्व भाव जब पा ही ले, तब भगवान ही आते हैं।
बहु रूप धर विविध विधि, ऐसे को समझाते हैं।।15।।

श्याम ने भी स्वयं कहा, पुनि पुनि वह आते हैं।
ऐसे देवता कारण ही, जीव रूप धरी आते हैं।।16।।

महा श्रेष्ठ पुण्यात्म ही, उत्कृष्ट ही उनको जाने हैं।
परीक्षा लेकर ही सही, सत्त्व सार पहचाने हैं।।17।।

न्यूनता वा दर्शायें श्याम, दुर्गुण वह दर्शाते हैं।
देवता दुर्गुण पूर्ण अंश, दर्शाये करी मिटाते हैं।।18।।

फिर वैसा बनना चाहते हैं, एक रूपता चाहते हैं।
पदचिन्ह उनके देख करी, जीवन में बढ़ जाते हैं।।19।।

साध्य बिना साधक नहीं, लक्ष्य सम्मुख जो धर लिया।
गुणातीतता दैवी गुण, साधक निज में लायेगा।।20।।

दैवी सम्पदा परिपूर्ण, देवता वह हो जायेगा।
तत्पश्चात् गर पथ भूला, राम उठाने आयेगा।।21।।

ज्ञान-विज्ञान सहित

साधक की जो बात कहो, लक्ष्य प्रथम बना वह ले।
अहं मिटाव वह समझ तो ले, तत्पश्चात् वह क़दम धरे।।22।।

अहं मिटाव की बात नहीं, अहं ने राम में खोना है।
'मैं' की जगह पे समझ मना, वहाँ राम को होना है।।23।।

जग तो तोरा नाम ले, तू जाने नाम है राम का।
जग तुझको ही मान दे, तू जाने मान है राम का।।24।।

बुद्धि मिटाव की बात नहीं, बुद्धि त्याग की बात नहीं।
बुद्धि बुलंद अब करनी है, शुद्धता बिन कोई बात नहीं।।25।।

स्थितप्रज्ञा बुद्धि हो जाये, निरपेक्ष वह निर्णय ले पाये।
श्रेय पथ भला प्रेय पथ भला, आप ही उसको दिख जाये।।26।।

दैवी गुण का मान करे, दैवी गुण उसे भला लगे।
बाह्य से मिले या ना भी मिले, आप से गुण वह बहा करे।।27।।

गुणातीतता वह चाहे, गुणन् से वह उठ जाये।
गुण तो बहते जायेंगे, गुण से वह नहीं रंग पाये।।28।।

संग त्याग ही राह है, निज बुद्धि से संग तजो।
आप जो निर्णय तुम अब लो, उस निर्णय सों संग तजो।।29।।

कोई माने या ना माने, यह दूजे पे छोड़ दो।
गुण बधित वह सम्मुख खड़ा, यह जान के संग तुम छोड़ दो।।30।।

मनो मान्यता भावना, स्वभाव विमुक्त कर तेरे।
भाव स्वभाव और भावना, सम्मुख धरी के देख तो ले।।31।।

इन्द्रिय शक्ति जो तेरी, साधना ओर वह गर लगे।
दैवी सम्पदा उत्पन्न हो, इसमें ही गर चित्त धरे।।32।।

गुण से उठ ही जायेगा, प्रभावित हो नहीं पायेगा।
कोई बुरा करे कोई भला करे, गुण खेल तू देखे जायेगा।।33।।

सत्त्वसार गर समझ ले, गुण गुणन् में वर्त रहे।
भाव स्वभाव प्रकृति रचे, नटवर नाटक कर रहे।।34।।

विवेक की ज्योति तू चाहे, दूजा तो नहीं चाहता है।
तू तो गुण सब देख सके, दूजा देख नहीं पाता है।।35।।

तू स्थापित हो ना भी हो, अहं अब उठ नहीं पायेगा।
गुण गुणन् में वर्त रहे, यह सब देखे जायेगा।।36।।

गुण से सम्पूर्ण जीव बंधे, इसका राज़ गर समझ ले।
दैवी गुण जिसको कहें, स्वतः वह सम्पद् तोरी भये।।37।।

अहं ही है जो दोष मढ़े, निज को श्रेष्ठ बताता है।
यथार्थ सत् जो देख ले, अहं स्वतः मिट जाता है।।38।।

परिवर्तन तब अहं चाहे, जब सत् में टिक नहीं पाता है।
विपरीत देख के मन तेरा, भड़क भड़क तब जाता है।।39।।

त्रिगुणात्मिका शक्ति देख, जिस आसरे राम ने सब रचे।
गुण बधित इस जग को देख, गुण राही वह वर्त रहे।।40।।

इतना सा गर समझ तू ले, देवत्व पा जायेगा।
बाकी अहं जो रह गया, उसे राम मिटाने आयेगा।।41।।

14.11.1966

गुरु कृपा से ज्ञान यज्ञ

डॉ. जे.के. मेहता

गीता के चौथे अध्याय में भगवान ने अनेकों प्रकार के यज्ञों का विस्तार पूर्वक वर्णन किया है। जीवन में अपने-अपने स्वभाव और कर्मप्रणाली के अनुकूल भगवान हर प्राणी को अपने कर्मों को यज्ञमय बनाने के लिये प्रेरणा दे रहे हैं। दूसरे के कल्याण अर्थ दूसरे के लिये किया गया कर्म ही यज्ञ कर्म है। यज्ञ करने वाला साधक अपने लिये कुछ नहीं चाहता।

सर्वश्रेष्ठ यज्ञ

निष्काम भाव से दूसरे के हित में किया हुआ कर्म दान कहलाता है। निष्काम कर्म करने वाला अपनी क्षति या हानि को मुसकुरा कर सह लेता है और उसके प्रति मौन रहता है। यही तप है। दान और तप यज्ञ के अनिवार्य अंग हैं। जीवन में इनको धारण किये बिना साधक यज्ञ तक पहुँच ही नहीं सकता। साधक समभाव से सबके लिये निष्काम कर्म करता हुआ अपने आपको भूल ही जाता है। जब अपने-पराये, मित्र-शत्रु का भेद ही नहीं रहता, तब साधक के सब कर्म यज्ञमय बन जाते हैं।

स्थूल कर्म तो हर साधक के उसकी परिस्थिति के अनुसार भिन्न-भिन्न होंगे, परन्तु इन सब में उसका भाव यज्ञमय होता है।

इन सब यज्ञों में भगवान ने ज्ञान यज्ञ को सर्वश्रेष्ठ कहा है और यह भी कहा है, कि अखिल कर्म ज्ञान में समाहित होते हैं।

श्रेयान्द्रव्यमयाद्यज्ञाज्ज्ञानयज्ञः परन्तप।
सर्वं कर्माखिलं पार्थ ज्ञाने परिसमाप्यते।।

श्रीमद्भगवद्गीता 4-33

अर्थात्- *हे पार्थ! सबके सब कर्म ज्ञान में ही समाप्त होते हैं, क्योंकि ज्ञान ही सब कर्मों की पराकाष्ठा है। भगवान अर्जुन से कह रहे हैं कि द्रव्यमय यज्ञ से ज्ञान यज्ञ श्रेष्ठ है, क्योंकि सम्पूर्ण कर्म ज्ञान में समाप्त हो जाते हैं।*

ज्ञान भी हो और उस ज्ञान का जीवन में यज्ञ रूप अभ्यास भी हो, तो निश्चित ही जीव परम सिद्धि पा सकता है।

जब जीव ज्ञान के आसरे देहात्म बुद्धि का ही त्याग कर देता है तथा अपने आपको भी नहीं अपनाता, तब वह तन के कर्मों से संग कैसे करेगा? तब वह कर्म उसके नहीं रहते, वह गुणों का खिलवाड़ मात्र रह जाते हैं। इसी कारण, ज्ञान यज्ञ को द्रव्य यज्ञ से श्रेष्ठ कहा है। ज्ञान यज्ञ करने वाला, अन्य सब यज्ञ भी, जब जब परिस्थिति आयेगी, स्वतः ही करेगा, क्योंकि उसके पास सम्पूर्ण यज्ञों का ज्ञान तो होगा ही।

यह ज्ञान यज्ञ आन्तरिक है और सूक्ष्म स्तर पर जीव के आन्तर में होता है। जीव के अचेत चित्त में अहं के संस्कार भरे पड़े हैं, जो अनेकों चाहनाओं और वासनाओं के राही मन में प्रकट होकर जीव को कर्मों में प्रेरित करते हैं। विषय और वस्तु के साथ संग इस अहं का सहज रंग है। जीव को यह अहं, इसकी स्थापति और चाह पूर्ति का सहज प्रवाह ही सत्य भासता है। यही अज्ञान का आवरण है जिसने आन्तर में स्थित भगवान को आवृत कर दिया है। इसके कारण ही नित्य परिवर्तनशील और अन्त में नाशवान होते हुये भी यह तन हमें नित्य और अमर सा भासता है।

ज्ञान तो यह है कि भगवान का ही अंश यह आत्म तत्व नित्य है, अमर है, एकरस, अखण्ड रस, कभी न घटने-बढ़ने वाला और सर्व व्यापक है। पूर्ण संसार उससे उभर कर, सब उसमें ही समाहित हो जाता है। उसके अतिरिक्त यहाँ और कुछ भी नहीं। ऋषियों, मुनियों, भक्तों ने पुनः इसी सत्य का अनुभव किया है। इस आत्म तत्व में समाहित होना ही साधक का एकमात्र लक्ष्य है। यह केवल ज्ञान यज्ञ के द्वारा ही सम्भव है।

भगवान ने अन्य जितने भी यज्ञों की बात की है, वह सब मानो इस ज्ञान यज्ञ की तैयारी के लिये हैं। उनको किये बिना ज्ञान यज्ञ का अभ्यास आरम्भ नहीं हो सकता। ज्ञान यज्ञ ही वह परम पावनी अग्न है जो अज्ञान के आवरणों को पूर्णतया मिटा सकता है। ज्ञान के भण्डार, यह सम्पूर्ण शास्त्र, ऋषियों, मुनियों, भक्तों और अवतारी पुरुषों के अनुभवों पर आधारित, उनके जीवन राही प्रमाणित, उनके वाक् हैं। इन तत्वदर्शी ज्ञानीजन के द्वारा ही जीवन में इस ज्ञान यज्ञ का अनुष्ठान सम्भव है।

जीव में ज्ञान का प्रकट रूप

35 वर्ष से मुझे पूज्य माँ का सम्पर्क प्राप्त है। उन्होंने न तो कभी अपनी स्थिति के बारे में कोई बात करी और न ही कभी गुरु का पद अपनाया है। पहले दिन मैंने उन्हें किसी की चाकरी में अपने आप को नितान्त भूले हुये पाया और मैं अनायास ही उनकी निष्कामता से आकर्षित हो गया।

तत्पश्चात् वह मेरी और मेरे परिवार की चाकरी भी करने लगे। तब से लेकर आज तलक, जो भी उनके सम्पर्क में आया, चाहे वह मित्र हो या शत्रु, अमीर हो या ग़रीब, मैंने सदा ही उनको अपने

आप को भूल कर, सबके कष्ट, क्लेश का निवारण करते हुये, सबको सुख देते हुये, और सबके स्वप्न पूरे करते हुये ही पाया। निरन्तर पाँच वर्ष तक उनके इस निष्काम और समत्व भाव से बहने वाले दिव्य प्रेम का दर्शन करने के पश्चात् मेरा हृदय अनायास ही उन्हें 'माँ' कहकर पुकार उठा।

जो भी उनका सम्पर्क पाये हैं, उन सबका भी यही अनुभव है। सब उनमें प्रेम स्वरूपा 'माँ' के दर्शन पाते हैं और उनको 'माँ' कहकर ही पुकारते हैं। आज उन्हीं से प्राप्त ज्ञान द्वारा और इस दीर्घकालीन सम्पर्क के परिणामस्वरूप मैं जाना हूँ कि गीता कथित यज्ञ की प्रतिमा 'माँ' स्वयं आप हैं।

उन्हीं के इस यज्ञमय जीवन के प्रसाद रूप मधुबन में 'अर्पणा' का प्रत्येक जीव अपने स्वप्नों की पूर्ति पाता हुआ महा सुखी है और अपने जीवन को यज्ञ की प्रणाली में ढालने के प्रयत्न कर रहा है।

पूज्य माँ का सहज जीवन दैवी गुणों का प्रवाह है, परन्तु उनका अपने इस देवत्व के प्रवाह से कोई संग नहीं, इसका कोई अहं नहीं। कहना है तो चाहे कह लो, वह तो भगवान में पूर्ण ही लय हो चुके हैं। उनका जीवन निरन्तर भगवान के नाम का एक अखण्ड प्रवाह है.. ज्ञान और भक्ति की पराकाष्ठा है, शास्त्र की वाणी में वह तत्व दर्शी हैं।

यह हमारा अनुपम सौभाग्य है कि हमें उनका सम्पर्क तथा उनके साथ रहने का मौका मिल रहा है।

ज्ञान प्राप्त करने की विधि

ज्ञान प्राप्त करने की विधि बताते हुये भगवान ने गीता में कहा:

त द्विदिध प्रणिपातेन परिप्रश्नेन सेवया।
उपद क्ष्यन्ति तेज्ञानं ज्ञानिनस्तत्वदर्शिनः।।

श्रीमद्भगवद्गीता 4-34

अर्थात्- भली प्रकार दण्डवत् प्रणाम, सेवा और निष्कपट भाव से किये गये प्रश्न द्वारा उस ज्ञान को जान! वे मर्म को जानने वाले ज्ञानी जन तुझे उस ज्ञान का उपदेश करेंगे। भगवान द्वारा कहे हुये ज्ञान यज्ञ को प्राप्त करने की यही एक सहज विधि है। प्रणिपात, सेवा और परिप्रश्न के द्वारा ही यह ज्ञान गुरु से प्राप्त किया जा सकता है।

प्रणिपात का अर्थ है - साष्टांग प्रणाम! अर्थात् अपने सम्पूर्ण अंगों द्वारा प्रणाम! बिन बुद्धि के सीस झुकाये प्रणिपात नहीं होता। तत्व दर्शन सदगुरु का वाक् ही उनकी बुद्धि का प्राकट्य है। उनकी बुद्धि तत्व से, यानि ब्रह्म से प्रवाहित होने के नाते परम है, उनका वाक् ही परम का वाक् है। आन्तर में

मौन हो कर उस वाक् को ग्रहण करना ही वास्तविक प्रणिपात है, और जीवन में उनके आदेश का अक्षरांश पालन करना ही उनकी सेवा है।

अपने मस्तिष्क को न्यून मान कर गुरु के चरणों में धरना ही प्रणिपात है। विनम्र भाव वाला होना एवं दूसरे की श्रेष्ठता का अभिनन्दन करना ही तो प्रणिपात है। श्रद्धा और भक्ति पूर्ण होकर, गुरु चरणरज अपने सीस धरना व अपने अभिमान पूर्ण अहंकार से नीचे उतरना ही प्रणिपात है।

साधक के हृदय में सदगुरु के प्रति संशय रहित श्रद्धा अनिवार्य है और उसके लिये गुरु सहवास और निरन्तर यज्ञमय जीवन का अभ्यास ही सहज विधि है। यज्ञमय जीवन का अभ्यास करता हुआ, शास्त्र के प्रकाश में गुरु के जीवन का हर पल दर्शन करता हुआ, साधक इस निष्कर्ष पर पहुँच जाता है कि गुरु ही उस शास्त्र का जीवन में प्रमाण है, तत्पश्चात् वह अपनी बुद्धि को उनके चरणों में झुका देता है।

गुरु आज्ञा मानना उनकी सेवा है। उनके शारीरिक सुख के उपार्जन अर्थ कर्म करना सेवा है। श्रेष्ठ जन का नित्य अनुसरण करना उनकी सेवा है। उनके गुणों का अभ्यास करना सेवा है। उनके गुणों पर ध्यान देना सेवा है।

सदगुरु ही साधक को सतपथ पर ले जा सकते हैं। साधक को चाहिये कि आन्तर में नितान्त मौन रह कर गुरु के वाक् का पालन करे। इसमें उसका अपना मन, अपनी रुचि-अरुचि, अपनी मान्यता ही बाधा बनते हैं। साधक इनको स्पष्ट देखता हुआ इनके निवारण अर्थ इनको गुरु चरणों में धरता रहता है। यही तो उसका परिप्रश्न है। ऐसी अवस्था में, अपनी शरण में आये साधक का, सदगुरु उसके अहंकार से स्वयं ही संरक्षण करते हैं।

पूज्य माँ ने आज तक न तो कभी अपने को गुरु माना और न ही कभी कहा, परन्तु उनके सहज जीवन के प्रकाश में उनकी वाणी द्वारा प्रवाहित ज्ञान सुनते सुनते शास्त्रों के अर्थ भी आज स्पष्ट होने लगे हैं। इतने वर्ष के सम्पर्क के परिणामस्वरूप उनका जो दर्शन पाया, उसके परिणामस्वरूप आज हम ही उन्हें शास्त्र की सजीव प्रतिमा, तत्व दर्शी अथवा भागवद् प्रेम का निरन्तर प्रवाह चाहे कहें, परन्तु वह तो सबके तदरूप हो कर सबके क्लेश मिटाकर उन्हें सुख देने और उनके स्वप्न पूरे करने के लिये, सबको भगवान रूप जान कर निरन्तर उनकी चाकरी में लगे रहते हैं।

ऐसे सदगुरु को हृदय में धारण करके जीवन में प्रणिपात, सेवा और परिप्रश्न ही साधक के लिये सत पथ पर चलने की सहज विधि है। ❖

पूर्व अभिलेख संग्रह में से

बुद्धि - एक दर्शन

(परम पूज्य माँ द्वारा समय समय पर बुद्धि के विषय में प्राप्त सत्संगों तथा उनके जीवन की छोटी-छोटी झलकियों और उदाहरणों के प्रकाश में वास्तविक बुद्धि को समझने का एक क्षुद्र प्रयास है प्रस्तुत लेख! आशा है मेरी न्यूनता को दृष्टिगत न करके पाठकगण इसमें निहित रहस्य को ग्रहण कर पायेंगें।)

विष्णु प्रिया महता

हम सब न केवल अपने को बुद्धि जीव मानते हैं, बल्कि अपने सामने किसी अन्य की बुद्धि की परवाह ही नहीं करते.. अर्थात् यह हमारी दृढ़ धारणा है कि हमारे समान बुद्धिमान संसार में कोई अन्य है ही नहीं। परन्तु क्या कभी दो पल के लिये भी विचार किया कि वास्तविक बुद्धि है क्या? शास्त्र किसे बुद्धि कहते हैं? तनिक विश्लेष्णात्मक दृष्टि से इस बुद्धि को समझने का प्रयास तो करें।

वास्तव में निरक्षेप, निर्णयात्मिका शक्ति ही बुद्धि है। जिस प्रकार न्यायालय में न्यायधीश पक्षपात रहित होकर न्याय करता है, वहाँ अपने और पराये का भेद हो ही नहीं सकता.. इसी प्रकार वास्तविक बुद्धि परिस्थिति में अपने या पराये से प्रभावित नहीं हो सकती।

न्यायधीश की नियुक्ति से पहले ही भली प्रकार जाँच कर ली जाती है कि उसका कोई सम्बन्धी न हो, ताकि वह पूर्णतया निष्पक्ष और निरपेक्ष हो कर न्यायपूर्ण निर्णय दे सके! इसी प्रकार वास्तविक बुद्धि भी वही है जो अपने संग, मोह, अहंकार, रुचि-अरुचि इत्यादि से प्रभावित हुए बिना परिस्थिति में निरपेक्ष तथा निष्पक्ष निर्णय दे सके। जिस प्रकार न्यायधीश का निर्णय वास्तविक तथ्यों पर आधारित है, वह यह नहीं सोच सकता कि कटघरे में खड़ा व्यक्ति उसका मित्र है अथवा शत्रु है, राग अथवा द्वेष

के लिये वहाँ पर कोई स्थान नहीं.. इसी प्रकार बुद्धि वास्तविक विवेकपूर्ण शक्ति तभी बनती है, जब अपने ही संग, मोह, लग्न इत्यादि विकारों से प्रभावित हुए बिना सत्य तथ्य को निरख सके।

इस बुद्धि का व्यावहारिक रूप समझने के प्रयास में पूज्य माँ के जीवन की अनेकों घटनायें स्मृति पटल पर उभर आती है।

बचपन से ही उनकी विचार तथा विवेकशीलता का परिचय मिलता है! उनको यह बात समझ ही नहीं आती थी कि जिस दोष के लिये हम दूसरे से लड़ पड़ते हैं अथवा उसको दण्ड देते हैं, उसी दोष के लिये हम अपने को क्षमा कैसे कर सकते हैं? निरपेक्ष बुद्धि का अभ्यास तो मानो होश सम्भालते ही आरम्भ हो गया था। बालसुलभ निर्णयात्मिका बुद्धि का प्रमाण तो हमें इनके बचपन में ही मिलता है।

बचपन में ही स्कूल और कॉलेज के दिनों में अपने ही साथियों से कभी मतभेद हो जाता, तो इनके विरोधी पक्ष वाले निर्णय करवाने के लिये सदा इनके ही पास आते। वह इस रहस्य को पहचान चुके थे कि इनका निर्णय सदा अपने विरुद्ध और विरोधी पक्ष के हक में होगा।

अपने को उचित अथवा ठीक सिद्ध करने के लिये इनका कोई भी तर्क अथवा प्रयास न होता। इनका ऐसा विलक्षण दृष्टिकोण देख कर इनके समर्थक अनेक मित्र आश्चर्यचकित हो कर इनसे एक ही प्रश्न करते - "तुमने ऐसा क्यों किया? हमें तो लगता है कि तुम ठीक हो, और दूसरा पक्ष अनुचित है।"

अपने समर्थन से प्रभावित हुए बिना, इनका स्पष्ट एवं निःसंकोच उत्तर कुछ इस प्रकार होता- "दूसरे का तो केवल स्थूल स्तर पर कर्म ही दीख रहा है.. कर्म के पीछे उसके भाव अथवा प्रेरक शक्ति अदृश्य हैं। परन्तु अपने स्थूल कर्म के साथ-साथ मैं अपने मन के भाव, और उसकी प्रेरणा शक्ति को भी देख सकती हूँ, सो दृष्ट रूप में ठीक दीखने पर भी मैं स्वयं अपने को कभी भी ठीक नहीं कह सकती।"

कितनी अलग सी है यह बुद्धि, हमारी परिभाषा से! हमारी बुद्धि का तो एकमात्र कर्म और धर्म है हमारे हर कर्म और हर भाव को ठीक प्रमाणित करके उसका समर्थन करना। वास्तव में हमारी तथाकथित बुद्धि के पूर्ण विकास का आधार ही यह आत्म समर्थन है।

"यदि हम अपनी बुद्धि के आधार का विश्लेषण करें और निष्पक्ष हो कर देखें, तो हमें पता चलेगा कि यह बुद्धि बनी कैसे? बचपन से ही जो विषय मुझे पसंद आया, उसका मैंने अनुसरण किया, उसकी उपलब्धि के लिये विभिन्न विधियों की खोज की.. जो पसंद नहीं आया, उसकी ओर न तो दृष्टि करी और न ही उस दिशा में कुछ भी प्रयास किया। यानि हमारी बुद्धि केवल हमारी रुचि-अरुचि की परिधि में ही सीमित रही.. कूप मण्डूक (कुएँ का मेंढक) की तरह न तो वह अपने से बाहर निकल पाई, और न ही बाहर का संसार देखा और न ही सराहा!"

सो, जिसे हम आज अपनी बुद्धि माने बैठे हैं और अपनी जिन मान्यताओं के कारण संसार भर से लड़ाई लेने को तैयार हैं, वास्तव में वह बुद्धि न हो कर अपने मन का ही एक परिवर्तित रूप है। वास्तविक बुद्धि तो वह है, जो अपनी रुचि-अरुचि, अनुकूल-प्रतिकूल, प्रिय-अप्रिय अर्थात् किसी भी द्वंद्व से प्रभावित न हो।

दूसरे शब्दों में जग सम्पर्क अथवा शास्त्र पठन द्वारा जो ज्ञान एकत्रित किया, वह बुद्धि नहीं! जो उस पढ़े हुए ज्ञान की तुला में अपने जीवन को तोल सके, वह निर्णयात्मिका शक्ति ही वास्तव में बुद्धि है।

अपने को ज्ञानी समझ कर तो सीखने की क्षमता वैसे ही समाप्त हो जाती है। जिज्ञासा ही वास्तविक बुद्धि की पहचान है। वास्तविक बुद्धि वही है जो सत्-असत्, नित्य-अनित्य का भली-भाँति विवेचन करके सत् की ओर अग्रसर हो सके।

इस सत्-असत् के विवेचन के लिये शास्त्र ही हमारे पथ-प्रदर्शक हैं। प्रज्ञावान तो वही है, जो शास्त्र कथित ज्ञान को अपने जीवन राही प्रतिपादित करता है।

गीता के द्वितीय अध्याय में श्लोक 54 से श्लोक 61 तक भगवान ने स्थितप्रज्ञ की बात भगवान कर रहे हैं, वह कोई चमत्कारिक उपलब्धि नहीं, अपितु यह तो जीवन में हर क़दम पर इस्तेमाल करने से ही विकसित होती है।

ऐसी बुद्धि को समझाने के प्रयास में पुनः याद आता है पूज्य माँ के बचपन ही का एक उदाहरण! बचपन से ही इनकी रुचि प्रयोगात्मक विषयों में बहुत थी। विज्ञान में जो विषय पढ़ा, उसको जीवन में प्रयोग करके उसकी सार्थकता की जाँच स्वयं करते जैसे बिजली के सामान इत्यादि की मरम्मत, यहाँ तक कि आवश्यकतानुसार घर में बिजली की तारें लगाने का भी काम स्वयं करके देखते! इसी प्रकार हर स्तर पर प्रयोग करके उसकी जाँच करना, बचपन से ही इनका सहज स्वभाव था।

जब उच्च श्रेणी में विषयों के चयन की बात उठी तो सब ने यही सोचा कि यह स्वभाविकतया विज्ञान का विषय ही चुनेंगी, परन्तु समय आने पर इन्होंने अपने लिये विषय चुना - हिन्दी! वास्तव में हिन्दी में विशेष रुचि अथवा उसका अधिक ज्ञान न होने के कारण, शिक्षक इनका यह निर्णय सुन कर बहुत हैरान हो गये! उनके पूछने पर जो उत्तर पूज्य माँ ने उन्हें दिया, उसके विषय में बहुत वर्ष बाद हमें उनके मुखारविन्द से ही पता चला। इनका दृष्टिकोण उस समय कुछ इस प्रकार था :

विज्ञान में तो मेरी सहज रुचि है, उसे तो मैं सीख ही लूँगी, परन्तु हिन्दी विषय मुझे नहीं आता- परीक्षा में उत्तीर्ण होने के लिये मेहनत करके मुझे वह विषय सीखना ही पड़ेगा.. इस तरह मैं दोनों ही विषय जान जाऊँगी, इसी सम्बन्ध में बात करते हुए उन्होंने कहा :

"नन्हीं सी री जब मैं थी, तब की तुझ को बात कहूँ।
भाषा नहीं मुझे आती थी, जब तुझ को बात कहूँ।।

अध्यापिका जो मेरी थी, उस कहा इसे छोड़ दो।
यह भाषा तुझे ना आये, इससों नाता तोड़ दो।।

कर जोड़े उसको मैंने कहा, कभी तो सीख ही जाऊँगी।
अभी तो कुछ पल रहने दो, भाषा में नाम कुमाऊँगी।।"

यह भी एक सोचने की विधि है, जो बहुत भिन्न है, हमारी स्वभाविक विधि से! परन्तु जीवन की इन छोटी झलकियों में निहित है एक अलौकिक और दिव्य बुद्धि का विकास! बचपन में अपने और परिपक्ष के मध्य में निरपेक्ष और निष्पक्ष न्याय का अभ्यास करती-करती यह न्यायप्रिय बुद्धि एक दिन अपने और भगवान के मध्य में भी न्याय करने बैठ जाती है।

इस अलौकिक बुद्धि के दर्शन हमें पूज्य माँ के प्रथम मन्दिर गमन के समय ही होते हैं। पहले ही दिन, मन्दिर में जा कर जब गीता शास्त्र का श्रवण किया, तो एकदम अपने और गीता, यानि भगवान कृष्ण के दृष्टिकोण का भेद आन्तर मन पर अंकित हुआ। शास्त्र सुनने पर आन्तरिक प्रक्रिया क्या रही होगी, यदाकदा पूज्य माँ के मुखारविन्द से सुनकर हम तो अपनी क्षुद्र बुद्धि से तनिक अनुमान ही लगा सकते हैं।

बुद्धि ने कहा- "जीवन के इतने वर्ष मैंने वही किया, जिसे मैं ठीक समझती आई! मेरा हर क़दम, मेरा हर प्रयास 'मैं' की स्थापति की दिशा में ही रहा। हर शुभ कर्म, अथवा इष्ट रूप से निष्काम कर्म के पीछे भी प्रेरणा शक्ति तो 'मैं' ही रही। आज पता चला, भगवान तो कुछ और ही बात कर रहे हैं। वह तो

प्रेम, क्षमा, करुणा, दया, उदारता इत्यादि दैवी गुणों की बात करके हमें आत्म विस्मृति की ओर ले जाना चाहते हैं। अब यह दोनों दिशाएँ इतनी ही विपरीत हैं, जितनी उत्तर और दक्षिण। इनका मिलन तो हो ही नहीं सकता।"

अब प्रश्न यह उठा, कि "या तो भगवान जो कहते हैं, वह ठीक है, या जो मैं कहती हूँ, वह ठीक है।" दोनों ठीक नहीं हो सकते।

'जीवनपर्यंत अभ्यास के परिणामस्वरूप बुद्धि में इतनी परिपक्वता' आ चुकी थी कि वह निष्पक्ष हो कर कह सकी, "इतने वर्ष तो अपने ढंग से जी कर देख लिया मैंने, अब कुछ देर भगवान के ढंग से भी जी कर देख लेती हूँ। आज के बाद भगवान के गीता रूप आदेश को अक्षरांश मानूँगी और उसे अपने जीवन में प्रतिपादित करूँगी। यह भाव निम्नलिखित पंक्ति में स्पष्ट दीखता है,

"गीता ज्ञान सिखा दे मुझ को, गीता ही बन जाऊँगी।"

उसके बाद जीवन का एकमात्र प्रयोजन रह गया.. भगवान के वाक को जीवन में उतारना और उसकी प्रतिमा बन जाना। इनकी सर्वप्रिय प्रार्थना भी उपनिषदों का वह शान्ति पाठ था, जिसमें कहा है;

याः उपनिषत्सु धर्माः ते मयि सन्तु ते मयि सन्तु

"अर्थात् जो धर्म उपनिषद् में कहे हैं, वह मुझ में हो जायें, वह मुझ में हो जायें।" और इसके बाद कभी मुड़ कर अपने तन, मन, बुद्धि की ओर नहीं देखा।

यह तो है उस बुद्धि का दर्शन जो सत् को पहचान कर अपने को उस यज्ञ में अर्पित कर देती है।

इस दर्शन से धन्य धन्य कह कर, भगवान के चरणों का आसरा लेकर ही हम भी इन पदचिन्हों का अनुसरण करके अपने जीवन को सफल बना सकते हैं।

पूर्व अभिलेख संग्रह में से

❖ ❖ ❖

परम पूज्य माँ

अर्पणा समाचार पत्र

अर्पणा ट्रस्ट, मधुबन,
करनाल, हरियाणा
जून 2025

अर्पणा आश्रम

महासमाधि दिवस

16 अप्रैल, परम पूज्य माँ की महासमाधि को चिह्नित करने वाला पावन दिवस है। शारीरिक रूप में वह अब हमारे साथ नहीं हैं परन्तु उनके मुखारविन्द से बहे स्वतः स्फुरित प्रवाह का दिव्य ज्ञान, 'उर्वशी' को उपहार रूप में पाकर हम धन्य धन्य हो गये। यह ऐसा ज्ञान है जो जिज्ञासुओं को आत्मज्ञान और शाश्वत आनंद की ओर ले जाने में सक्षम है।

इस विशेष दिवस पर उपस्थित सभी जिज्ञासुओं ने उनके इस दिव्य सार को आत्मसात किया.. जिससे हम वास्तव में सत् चित् आनंद को प्राप्त कर सकते हैं।

'उर्वशी ललित कला अकादमी' द्वारा भजनों की भक्तिमय प्रस्तुति ने वातावरण को प्रेम और सद्भावना से ओत-प्रोत कर दिया। इस आध्यात्मिक अमृत ने सभी के हृदयों में 'उर्वशी' के प्रेममय दिव्य प्रकाश का मानो संचार कर दिया हो.. सभी हृदयों ने मौन में परम पूज्य माँ को श्रद्धांजलि देते हुए उनके प्रति गहन कृतज्ञता प्रकट की।

पूज्य छोटे माँ एवं पूज्य पापाजी – अर्पणा के आध्यात्मिक स्तम्भ

10 मई 2025 को, 58 वर्षों से भी अधिक समय से परम पूज्य माँ की निरंतर साथी रहीं, पूज्य छोटे माँ, को सब ने बहुत-बहुत आभार के साथ याद किया। परम पूज्य माँ के प्रति उनकी आस्था एवं सतत समर्पण के प्रयास रूप हमें 'उर्वशी' का दिव्य प्रसाद प्राप्त हुआ.. परम पूज्य माँ द्वारा कहे गए शब्दों को लेखनीबद्ध करने के उनके अथक परिश्रम द्वारा ही हमें यह अमूल्य उपहार प्राप्त हो सका।

22 मई 2008 को, पापाजी ने अपने भौतिक शरीर का त्याग किया.. उनकी आत्मा अपने दिव्य गुरु में जा विलीन हुई। उनके आध्यात्मिक प्रेम ने कई जिज्ञासुओं के हृदयों में गहरे प्रेम की भावना जगाई.. वही परम पूज्य माँ का शाश्वत संदेश भी है - सभी से प्रेम करें।

अर्पणा अस्पताल एवं हरियाणा ग्रामीण विकास

गर्भाशय ग्रीवा कैंसर जागरूकता और स्क्रीनिंग शिविर

अर्पणा अस्पताल ने मई के महीने में 4 गाँवों में स्क्रीनिंग शिविर आयोजित किए। इस समस्या के विषय में जागरूकता बढ़ाने के लिए एक ग्रामीण कर्मचारी, 14 मोबिलाइजर एवं 5 स्वयं सहायता समूह के प्रशिक्षकों द्वारा 4 दिनों तक गृह भ्रमण किया गया।

लगभग 300 महिलाओं की जाँच की गई और प्रभावित महिलाओं को अर्पणा अस्पताल में भेजा गया जहाँ उनका यथा उचित उपचार किया गया।

अर्पणा में सामुदायिक स्वास्थ्य के लिए 'मिलन समारोह'

अर्पणा अस्पताल में 26 अप्रैल को, करनाल के कई गाँवों से 200 सरपंचों/पंचों, डॉक्टरों एवं सामाजिक कार्यकर्ताओं के साथ मिलकर एक बैठक आयोजित की गई, जिसमें बेहतर सामुदायिक स्वास्थ्य के लिए संयुक्त प्रयासों को प्रोत्साहित किया गया।

इस समारोह में अर्पणा की स्वास्थ्य सुविधाओं के विषय में बताया गया और प्रमुख स्वास्थ्य समस्याओं, जैसे गर्भाशय ग्रीवा कैंसर, मधुमेह तथा उच्च रक्तचाप के विषय में जागरूक किया गया।

स्वामी प्रेममूर्ति, निदेशक, मानव सेवा संघ, को इस 'मिलन समारोह' में श्री रवि दयाल द्वारा मानवता के प्रति उनकी असाधारण सेवा के लिए सम्मानित किया गया।

हरियाणा सरकार द्वारा दान की गई जीवन रक्षक उपकरणों से युक्त एम्बुलेंस

हरियाणा सरकार ने उदारतापूर्वक अत्याधुनिक जीवन रक्षक उपकरणों से युक्त एक एडवांस लाइफ सपोर्ट (एएलएस) एम्बुलेंस प्रदान की है। इससे आस पास के क्षेत्रों के मरीज़ों का समय पर उपचार कर पाने में काफ़ी सहायता मिलेगी।

गुजरात की उन्नति देखने के लिये कार्य अनुभव यात्रा

अर्पणा के ग्रामीण विकास कार्यक्रम के अन्तर्गत स्वयं सहायता समूहों से 23 महिला प्रशिक्षकों के लिए गुजरात जाने के लिये एक यात्रा आयोजित की गई! 3 से 10 अप्रैल तक उन सब ने कई स्थानों का भ्रमण किया और गुजरात में जनसाधारण के जीवन में उन्नति देख कर काफ़ी प्रभावित हुए। वे हरियाणा के गाँवों में प्रगति लाने के लिए नए नए विचार लेकर आए।

मौसमी बीमारियों की रोकथाम के लिए अर्पणा द्वारा तीन दिवसीय कार्यशाला

21-23 अप्रैल को आयोजित कार्यशाला में 12 प्रशिक्षकों और 5 अर्पणा स्टाफ़ सदस्यों ने सीखा:

- नाटकों, प्रश्नोत्तरी और कार्य योजनाओं के माध्यम से बीमारियों की रोकथाम करना।
- वरिष्ठ चिकित्सा अधिकारियों के साथ नई सरकारी स्वास्थ्य नीतियों पर चर्चा।
- जल आपूर्ति विभाग के साथ गाँव की पेयजल प्रणालियों को समझना।

अर्पणा, हरियाणा में विकास कार्यक्रमों और अस्पताल को उन्नत सेवाएं देने में सक्षम करने के लिए ओरबिस फाइनेंशियल कॉर्पोरेशन लिमिटेड (गुरुग्राम), बैजनाथ भंडारी पब्लिक चैरिटेबल ट्रस्ट (नई दिल्ली) और हरियाणा के मुख्य मंत्री कोष से मिले समर्थन के लिए बहुत आभारी है।

दिल्ली शिक्षा कार्यक्रम

अर्पणा शिक्षा कार्यक्रम, मोलरबंद, नई दिल्ली

साम्य 93%

कक्षा 10वीं और 12वीं सीबीएसई बोर्ड परिणाम 2025 - सभी उत्तीर्ण!

कक्षा 12वीं की बोर्ड परीक्षा अर्पणा के 33 विद्यार्थियों ने दी। 93% अंकों के साथ साम्य प्रथम स्थान पर रहीं; चाँदनी दूसरे स्थान पर रहीं (85.6%) और ख़ुशी तीसरे स्थान पर रहीं (84%)। **कक्षा 10वीं की बोर्ड परीक्षा** 70 विद्यार्थियों ने दी। अदिति 85.4% अंकों के साथ प्रथम स्थान पर रहीं; साजर 82% अंकों के साथ दूसरे स्थान पर और स्नेहा 73% अंकों के साथ तीसरे स्थान पर रहीं।

स्वयंसेवकों ने प्राथमिक शिक्षकों के लिए कार्यशालाएँ आयोजित कीं

श्रीमती रोमिला कपूर ने 21 अप्रैल को प्राथमिक अनुभाग के सभी शिक्षकों के लिए बच्चों में नैतिक मूल्यों को कैसे विकसित किया जाए, इस विषय पर कार्यशाला आयोजित की।

श्रीमती साधना चंद्रा ने 23 अप्रैल को प्राथमिक विद्यालय के शिक्षकों के लिए राष्ट्रीय शिक्षा नीति (एनईपी) के दृष्टिकोण और प्रमुख सिद्धांतों पर एक सत्र आयोजित किया।

कॉमन यूनिवर्सिटी एंट्रेंस टेस्ट (CUET) के लिए विशेष कक्षाएं

अर्पणा के 14 छात्र CUET परीक्षा पास करके दिल्ली विश्वविद्यालय से स्नातक की डिग्री प्राप्त करना चाहते हैं.. उनके इन सपनों को पूरा करने के लिए अर्पणा के शिक्षक श्रीमती शकुंतला यादव और श्री राहुल रोज़ाना दोपहर 12 से 1:30 बजे तक अतिरिक्त कक्षाएं ले रहे हैं।

वसंत विहार में 'ज्ञान आरंभ'

12-23 मई तक आयोजित समर कैंप की गतिविधियो में विज्ञान प्रयोग, गणित कौशल, आग रहित खाना बनाना, खेल, संगीत और कला एवं शिल्प शामिल थे।

इन मनोरंजक समर गतिविधियों ने रचनात्मकता, आलोचनात्मक सोच और पढ़ने के प्रति प्रेम को प्रोत्साहित किया।

कक्षा 10वीं और 12वीं सीबीएसई बोर्ड परिणाम 2025 – 'ज्ञान आरंभ'

कक्षा 10वीं और 12वीं के सभी छात्र सफलतापूर्वक उत्तीर्ण हुए। अर्जुन ने कक्षा 10वीं में 75% अंक प्राप्त किए, जबकि डॉली ने कक्षा 12 में 83.33% अंक प्राप्त करके सर्वोच्च स्थान प्राप्त किया।

अर्पणा, केयरिंग हैंड फॉर चिल्ड्रन (यूएसए), एस्सेल सोशल वेलफेयर फाउंडेशन (नई दिल्ली), अवीवा लाइफ इंश्योरेंस (गुरुग्राम), आईडीआरएफ (यूएसए) से शिक्षा कार्यक्रमों के लिये मिले सहयोग के लिए अत्यन्त आभारी है।

हिमाचल प्रदेश कार्यक्रम

हिमाचल के सुदूर गाँवों में अर्पणा के निःशुल्क चिकित्सा शिविर

डलहौज़ी के बकरोटा क्षेत्र में स्थित अर्पणा स्वास्थ्य केंद्र, वहाँ के पहाड़ी लोगों को प्रतिदिन बाह्य रोगी क्लीनिक की सेवाएं उपलब्ध करा रहा है। निःशुल्क ग्रामीण और विशेषज्ञ चिकित्सा शिविरों के लिये मुख्य रूप से बैज नाथ भंडारी पब्लिक चैरिटेबल ट्रस्ट द्वारा सहायता प्रदान की जाती है।

डॉ. मगोत्रा, एमबीबीएस, मास्टर इन क्लिनिकल ट्रॉपिकल मेडिसिन, और अर्पणा के वरिष्ठ चिकित्सा अधिकारी ने हाल ही में अर्पणा शिविर आयोजित किए:

- **6 अप्रैल को बलेरा गाँव में:** 127 मरीज़ आये, 100 रक्त परीक्षण किये गये, 82 में उच्च रक्त शर्करा थी।
- **11 मई, खलंदर/गुनियाला गाँव में:** 140 मरीज़ आये, 116 रक्त परीक्षण हुए, 77 में उच्च रक्त शर्करा थी, 28 ईसीजी परीक्षण किये गये और 71 में जोड़ों/पेट में दर्द, ऑस्टियोआर्थराइटिस, एलर्जी आदि के लिए इंजेक्शन लगाए गए।

दो किसान उत्पादक संगठनों की आम बैठक

रावि वैली और गजनोई किसान उत्पादक संगठन, जिन्होंने 657 पुरुष और महिला किसानों को उनकी आय बढ़ाने में सक्षम किया, द्वारा 10/04/25 और 25/4/2025 को क्रमशः वार्षिक बैठकें आयोजित की गईं। लाभांश वितरित किए गए; उसके बाद नई व्यावसायिक योजनाओं, सदस्यों और आपूर्तिकर्ताओं पर विचार विमर्श किया गया।

अर्पणा, हिमाचल कार्यक्रमों के लिए श्री रविंदर बहल (नई दिल्ली) और बैज नाथ भंडारी पब्लिक चैरिटेबल ट्रस्ट (नई दिल्ली) के सहयोग के लिए बहुत आभारी है।

LET'S EMPOWER VULNERABLE WOMEN AND CHILDREN AS THEY REACH FOR THEIR DREAMS!

ARPANA TRUST

EDUCATION FOR DISADVANTAGED CHILDREN

- Tuition support for classes 1-12 pre-school Classes for toddlers, cultural activities.
- Vocational training classes.

HUMANE VALUES FOR AN EQUITABLE SOCIETY

- Dramas, Publication, Satsangs
- Charitable grants for the vulnerable
- Health/Socio economic assistance

DONATE ONLINE

ARPANA RESEARCH & CHARITIES TRUST

PROVIDES MODERN HEALTH CARE THROUGH

- Arpana Hospital for free /affordable health care.
- Arpana Medical centre, Himachal

EMPOWERING WOMEN

- Self Help Group & SHG Federations.
- Micro – Credit, Income generation, community development

EMPOWERING THE DIFFERENTLY ABLED

- Differently Abled Persons Organizations for health, assistive devices, certifications and income generation.

DONATE ONLINE

DONATIONS TO ARPANA ARE 50% TAX EXEMPT UNDER SECTION 80G, INCOME TAX ACT 1961

Cheques in favour of Arpana Trust and Arpana Research & Charities Trust to be sent to:
Information & Resources Department
Arpana, Madhuban, Karnal- 132037, Haryana

Donations through Direct Bank Remittance:
Bank of India, Karnal (IFSC Code: BKID0006750)
Arpana Research & Charities Trust; Bank Account No. 675010100100014,
Arpana Trust Bank Account No. 675010100100001

FOREIGN DONATIONS TO ARPANA ARE 100% TAX EXEMPT WHEN SENT THROUGH:

Arpana Canada
Mrs. Sue Bhanot, 7 Scarlett Drive, Brampton,
Ontario L6Y 359 Canada
Email: suebhanot@rogers.com

India Development & Relief Fund (IDRF)
Mr. Vinod Prakash, President, IDRF, 5821 Mossrock Drive,
North Bethesda, MD 20852 USA
E mail: vinod@idrf.org

Contact Us:
Harishwar Dayal, Executive Director +91 98186 00644
Email us: arct@arpana.org | at@arpana.org

Aruna Dayal, Director Development +91 99916 87310
Websites www.arpana.org www.arpanaservices.org

Arpana Ashram

Research

Publications & CDs

Arpana endeavours to share its treasure of inspiration – the life, words and precept of *Pujya Ma*, through the publication of books and cassettes.

Publications	
गीता	Rs.300
कठोपनिषद् हिन्दी	Rs.120
श्वेताश्वतरोपनिषद्	Rs. 400
केनोपनिषद्	Rs.36
माण्डूक्योपनिषद्	Rs.25
ईशावास्योपनिषद्	Rs.20
प्रश्नोपनिषद्	Rs.50
गंगा	Rs.40
प्रज्ञा प्रतिभा	Rs.30
ज्ञान विज्ञान विवेक	Rs.60
मृत्यु से अमृत की ओर	Rs.36
जपु जी साहिब	Rs.70
भजनावली	Rs.80
वैदिक विवाह	Rs.24
गायत्री महामन्त्र	Rs.20
नाम	Rs.15
अमृत कण	Rs.12
Let's Play the Game of Love	Rs. 400
Bhagavad Gita	Rs.450
Kathopanishad	Rs.120
Ish Upanishad	Rs.70
Prayer	Rs.25
Love	Rs.20
Words of the Spirit	Rs.12
Notes	Rs.10
Bhajan CDs	
ईशावास्योपनिषद् (a deluxe 8 CD set)	Rs.2000
स्वरांजलि (vol.1&2)	Rs.175each
नमो नमो	Rs.175
उर्वशी भजन	Rs.175
हे राम तुझे मैं कहती हूँ	Rs.75
गंगा (vol.1&2)	Rs.75each
राम आवाहन	Rs.75
तुमसे प्रीत लगी हे श्याम	Rs.75
हे श्याम तूने वंसी बजा	Rs.75
Bhajan Pen Drives	Rs.500

Arpana Pushpanjali

A Quarterly Magazine in Hindi/English

– Sent free online to donors, friends and associates of Arpana
– Donations to fund our heartfelt efforts are always welcome
– We look forward to feature advertisements in our journal

Advertisement rate	**Single issue**	**Four issues**
Full Page	2000	6000
Half Page	1200	4000

(Amounts are in Rupees)

Address: Arpana Trust (Pushpanjali & Publications)

Delhi Address:
E-22 Defence Colony, N Delhi 24
Tel: 41553073
Donation cheques to be addressed to: Arpana Trust
(payable at Delhi)

Kindly add Rs. 25 to books priced below Rs. 100 & Rs. 40 to books above Rs. 100 as postal charges.
For ordering of books, please address M.O/DD to: **Arpana Publications** (payable at Karnal)
For online payments: **Arpana Publications, A/c no. 675010100100009 Bank of India, IFSC - BKID0006750**

Arpana Trust *- Donations for Spiritual Guidance Activities, Publications, Scholarships and Delhi Slum Project are 50% tax exempt. Send to: Information & Resources Dept., Madhuban, Karnal, Haryana.*
For foreign donations*, Arpana Trust is approved under FCRA with Registration No.172310031*
For 100% tax exempt donations, send to: USA: IDRF, Mr. Vinod Prakash, President, email: vinod@idrf.org.
For Canada: Arpana Canada, 7 Scarlett Dr., Brampton, Ontario L6Y359, email: suebhanot@rogers.com

Applied Research

Medical Services

In Haryana
– 100 bedded rural Hospital
– Maternity & Child Care
– Cardiovascular Health
– Outreach & Specialist Camps
– Dialysis
– TB Program
– Emergency Care Workshop
– 12 bed ICU & Neonatal ICU

In Himachal
– Medical & Diagnostic Centre
– Integrated Medical & Socio-Economic Centre

Women's Empowerment

Capacity Building
– Entrepreneurial activities
– Local Governance
– Leadership Training
– Micro-Planning
– Legal literacy

In Haryana
– Women Self Help Groups
– Community Health & Nutrition
– Gender Sensitization
– Domestic Violence
– Differently Abled Empowerment

Child Enhancement

Education
– Children's Education
– Vocational Education
– Cultural Opportunities
– Pre-school Care & Education
– Scholarships

Health
– Nutrition Programme
– Health Program

Income Generation through Handicraft Training Skills

Arpana Research and Charities Trust *(ARCT) activities include Education, Health and Rural Development Donations can be sent to: Information & Resources Department, Madhuban, Karnal, Haryana*
For foreign donations*, ARCT is approved under FCRA: Registration No.172310033. Donations are 100% tax exempt when sent to USA: IDRF. To Canada: Arpana Canada (see addresses above)*

Contact for Questions, Suggestions and Donations:
Mr. Harishwar Dayal, Executive Director, Arpana Group of Trusts, Madhuban, Karnal - 132037. Haryana
Tel: (0184) 2380801-802, 2380980 Email: at@arpana.org Website: www.arpana.org

All donation cheques/ DD to be addressed to : ARPANA TRUST (payable at Karnal)
For online payments: **Arpana Trust, A/c no. 675010100100001 Bank of India, IFSC - BKID0006750**